डॉ. शिवप्रसाद सिंह

घाटियाँ गूँजती हैं

832
.8 घा

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

घाटियाँ गूँजती हैं। बरफ़की आग-सा सच यही है कि चीनके आक्रमणसे गूँजी हिमालयकी घाटियाँ आज भी गूँजती हैं।

यह तो इतिहासके कहने और सभ्यता-संस्कृतिके समझनेके लिए रहे कि इस आक्रमणका क्या अर्थ हुआ और क्या इसके संकेत होते हैं। हम जो इस विपद्का सीधा लक्ष्य हुए और जिनपर कभी भी फिर यह टूटनेको है, उनके देखने-सोचनेके लिए यहाँ और-और बातें हैं, अडिग विश्वासकी, पीड़ा-आस्थाकी तथा अपने कवचके छिद्रोंकी जो उन घाटियोंमें आज भी गूँजती हैं।

प्रस्तुत कृतिका विशेष मूल्य और महत्त्व यहीं है। एक-एक दृश्यके तीन अंकोंका यह सहज अभिनेय नाटक उस बर्बर विश्वासघातका कोई इतिहास-जैसा न देगा, उस समूचे परिवेशका यह जलता साक्ष्य है जिसे आधार-रूपमें इतिहास मानेगा।

बड़ी मार्मिक बात और यह कि जैसे बिना बोले कथानक उजागर कर जाता है कि साहित्यकारका ऐसे समय क्या दायित्व होता है और यह भी कि अभीतक हमारे यहाँ वास्तवमें उसकी सारी भूमिका ऐसी ऊपरी और पीड़ा-शून्य-सी क्यों रही। ● ● ●

घाटियाँ गूंजती हैं

डॉ० शिवप्रसाद सिंह

*

भारतीय राजदूतावास
काठमाण्डौ

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक–१६७
सम्पादक एवं नियामक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन

८३९.८३२
सिं घटा

Lokodaya Series : Title No.167
GHATIYAN
GOONJATEE HAIN
(Drama)
Dr. Shivaprasad Singh

Bharatiya jnanpith
Publication

Third Edition 1965

Price Rs. 2.50

©

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय

९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय

दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

विक्रय केन्द्र

३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

तृतीय संस्करण १९६५

मूल्य दो रुपये पचास पैसे

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी-५

8996

भारतीय ज्ञानपीठ
मूल्य
संशोधित
४–००

अहं रुद्राय धनुरातनोमि
ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं
द्यावापृथिवी आ विवेश ॥

मैं ही ब्रह्मद्वेषी शत्रुओंके हननके लिए रुद्रके धनुष-को बाण साधकर तानती हूँ। मैं ही जनताके लिए युद्ध करती और शत्रुओंको मारकर पृथ्वी और आकाशमें शान्ति-रूपमें प्रतिष्ठित होती हूँ।

—वाक्सूक्त, ऋग्वेद १०।१२५।६

• • •

अग्नि-परीक्षामें उत्तम भारतीय राष्ट्रकी
जाग्रत नारी-शक्तिकी प्रतिनिधि
श्रीमती इन्दिरा गान्धीकी
रोज़ और क्यूलाकी ओरसे

पार्श्वभूमि

बीसवीं शतीके पूर्वार्द्धकी सबसे महत्त्वपूर्ण घटना हिरोशिमापर अणु-बमका गिराया जाना थी, इसमें शायद ही कोई सन्देह करे। इस घटनाने पूरे विश्वमें एक अजीब उथल-पुथल खड़ी कर दी। इस आघातने हमें मनुष्य-जातिके भविष्यपर फिरसे सोचने-विचारनेकी प्रेरणा दी। अणुशक्ति-के संहारक दुरुपयोगकी आशंका उन सभी लोगोंकी मन-बुद्धिकी प्रधान नियामिका बन गयी, जो समझ-बूझसे कुछ भी वास्ता रखते थे। किन्तु हिरोशिमाकी यह घटना इतनी महत्त्वपूर्ण केवल उन्हीं लोगोंको लगेगी जो स्थूल जगत्की हलचलोंको ही एकमेव विचारणीय वस्तु मान लेते हैं। बीसवीं शताब्दीमें ही, उसके उत्तरार्द्धमें एक ऐसी घटना भी घटी है, जो हिरोशिमाके विनाशसे कहीं अधिक भयंकर और अणुशक्तिके दुरुपयोगसे कहीं अधिक जघन्य रही है। यह घटना है भारतके साथ चीनका विश्वासघात। यह घटना मानस-क्षेत्रमें होनेके कारण उतनी अधिक स्फोटक और सहज लक्ष्य भले ही न रही हो, किन्तु उसका प्रभाव पहली घटनासे कहीं अधिक स्थायी और कहीं अधिक विनाशक होगा, इसमें सन्देह नहीं। आजके चीनी शासकोंने चीन और भारतकी जनताको एक दूसरेके आमने-सामने शत्रु-भावसे खड़ी कर दिया है। विश्वके क़रीब आधे जनसमूहका यह पारस्परिक वैर-भाव संसारके इतिहासका अश्रुतपूर्व तथ्य है – एक भयंकर, बीभत्स और आत्माको कँपा देनेवाला तथ्य; किन्तु यह तथ्य है और इसे तथ्य मानकर ही इसकी सारी बिभीषिकाओं और ध्वंसलीलाओंको झेलने और समझकर झेलनेकी आवश्यकता है।

सम्प्रति अणु-युद्धकी आशंकाके घने बादलोंसे मनुष्यताका चाँद उभर-सा रहा था। ऐसा लग रहा था कि एक-दूसरेके प्रतिद्वन्द्वी शत्रु तक भी यह स्वीकार करने लगे हैं कि सभी प्रकारके सिद्धान्तों, वादों और जीवन-प्रणालियोंसे मनुष्यता कहीं अधिक ऊँची वस्तु है। इसलिए इधर सह-अस्तित्व और विश्वशान्तिकी विचारधाराएँ ज़ोर पकड़ने लगी थीं; किन्तु आज विश्व-मानवताके सामने एक ऐसा तानाशाह राष्ट्र उभरने लगा है जो सह-अस्तित्व और शान्तिमें विश्वास नहीं करता। जो युद्धको अनिवार्य मानता है, क्योंकि उसे विश्वास है कि युद्धकी लपटोंमें संसारको झोंक देनेसे ही उसके तथाकथित ऊँचे सिद्धान्तोंका प्रचार-प्रसार हो सकेगा। यह एक विषम संकट है। हिटलरकी निरंकुश महत्त्वाकांक्षाने समूचे युरॅपको जिस प्रकार खूनसे नहला दिया, उसी प्रकार आजके चीनी शासक सारे एशिया-को लोहू-लुहान बना देनेका मनसूबा बाँध रहे हैं। वे यह जानते हैं कि आजका विश्वयुद्ध मूलतः अणु-युद्ध होगा। अणुबम द्वितीय विश्वयुद्धका विराम बना; किन्तु इस बार वह सर्व-ध्वंसकारी प्रलयका आरम्भ बनेगा। वे यह भी जानते हैं कि इस युद्धमें अपार जन-धनकी हानि होगी; किन्तु उन्हें इससे रंचमात्र भी चिन्ता नहीं होती, क्योंकि उनके लिए मनुष्यके जीवनका कोई मूल्य है ही नहीं। ऐसे भयंकर दुर्दान्त शत्रुसे जूझनेके लिए नियतिने हमारे इस प्राचीन, सांस्कृतिक और शान्तिप्रिय देशको ही चुना यह एक विडम्बना तो है; किन्तु यह सौभाग्य भी है।

चीनी शासक न केवल तानाशाह, निरंकुश और क्रूर हैं बल्कि विकट रूपसे छल-छद्ममें प्रवीण भी हैं। वे बड़ी आसानीसे सचको झूठ और झूठको सचमें बदल देते हैं। वे ग़रीब और शोषित जनताके प्रति अनिर्वचनीय सहानुभूतिसे लबालब भरे हैं। वे अपने सभी कुकृतियोंको ऊँचे-ऊँचे आदर्शों-के रंगीन मुखोशमें छिपाकर उपस्थित करते हैं। वे भारतकी जनताके शुभ-चिन्तक और सहयोगी बननेका नाटक करते हैं और उसे कष्टोंसे मुक्त कराने-के लिए स्वयम्भू उपकारकका बाना भी धारण कर चुके हैं। ऐसे बहुरूपिये

शत्रुको उसके सही रूपमें समझने और दूसरोंको समझानेका कष्टपूर्ण कर्तव्य भी नियतिने भारतको ही सौंप दिया है, यह भी विडम्बना नहीं, सौभाग्य ही है।

आज सम्पूर्ण एशियामें मनुष्यकी स्वतन्त्रता, देशोंकी अखण्डता, जनताका सुख-चैन, विश्वास-आस्था, धर्म-कर्म, न्याय-नियम तथा संस्कृति-सभ्यता संकटमें हैं। चीनी शासक जानते हैं कि उनके सर्वग्रासी अभियानमें कोई अवरोध खड़ा कर सकता है तो भारत ही। इसलिए वे किसी भी प्रकार भारतको विकसित होते नहीं देख सकते। हमारी अनेक सम्भावनाओंसे भरी योजनाओंमें बाधा डालना, उन्हें सैनिक संभारके दबावके नीचे टूट-फूट जानेके लिए विवश करना ही उनका उद्देश्य है।

इसी उद्देश्यसे प्रेरित होकर चीनी शासकोंने सभी प्रकारके मानवीय आदर्शोंकी अवहेलना करके, सभी प्रकारके सभ्य जनोचित आचार-व्यवहारको ठोकर मारकर हमारे देशपर यह बर्बरतापूर्ण धावा बोल दिया है। उत्तर पश्चिममें कराकोरम पर्वतांचलसे उत्तर-पूर्वीय लोहित नदकी उपत्यका तक सर्वत्र इस बीभत्स आक्रमणके चिह्न अंकित हैं। ८ सितम्बर १९६२ से निरन्तर चीनी सेनाका आत्मघाती सैलाब, लहरपर लहरके रूपमें, हमारी सीमाओंसे टकराता रहा है और पश्चिममें दौलतबेग ओल्दीसे लेकर स्पांगुर झील तक तथा पूर्वमें थागला, तवाङ्-जाङ्से लेकर किबूत्, वालोङ् तकके क्षेत्रोंका अतिक्रमण करता निरन्तर अधिकसे अधिक धरतीको लीलनेका प्रयत्न करता रहा है।

इस पूरी सीमापर फैले युद्ध-क्षेत्रकी सबसे हृदयविदारक घटना थी बोमदि लाका पतन। १६–१७ नवम्बरकी रातमें चीनी सेनाएँ छिपकर दिराङ्जंगकी घाटीको पार करके से लाकी मज़बूत रक्षापंक्तिको एक तरफ़से काटती हुई बोमदि लाकी बस्तीपर टूट पड़ीं। १८ नवम्बर रविवारके दोपहर बाद चीनियोंका बोमदि लाके क़स्बेपर जो बग़ीचोंका नगर कहा जाता है, क़ब्ज़ा हो गया। सारा देश पीड़ा और आत्मग्लानिकी आगमें

लहर उठा। चीनियोंको से लाके पासका गुप्तमार्ग कैसे मालूम हुआ? से लाके पास ब्रिगेडियर होशियारसिंह और उसके समरधनी जवानोंने आगे बढ़कर मोर्चेसे कतराती हुई चीनीसेनाके मार्गको रोकनेका जो वीरतापूर्ण प्रयत्न किया और मातृभूमिकी रक्षाके लिए इन मुट्ठी-भर भारतीय वीरोंने अपने प्राणोंकी जैसी आहुति दी, वह हमारे इतिहासको अविस्मरणीय घटनाके रूपमें ज्वलन्त अक्षरोंमें अंकित रहेगी।

यह सारा कुछ परिवेश इस नाटकका आधार है। स्पष्ट ही दो सहस्र मील लम्बी सीमापर होनेवाला यह युद्ध, इसकी बीभत्स लीलाएँ, देशकी एकता और अडिग संकल्पकी शक्ति, अपमान और ग्लानिका रोमांचकारी भाव, शत्रुकी कृतघ्नता, उसका छल-छद्म, राजनीतिक प्रचार, भारतीय जनताके स्वयम्भू शुभचिन्तक चीनियोंका पाखण्ड, शान्तिका नाम लेनेवाले लुटेरोंकी खोखली भाषा, अफ्रो-एशियन एकताको ठोकर मारनेवाले नृशंस शत्रुकी लच्छेदार मित्रता-वाणी, किसी भी एक नाटकमें कभी न सिमट सकनेवाली सामग्री है। इसे इस नाटकमें पृष्ठभूमिके रूपमें स्वीकार किया गया है ताकि इस पृष्ठभूमिपर संघर्षरत भारतीय राष्ट्रकी आत्माका पूर्ण प्रकाश प्रस्फुटित हो सके। यह पूरे राष्ट्रके लिए अग्निमें अवभृथ-स्नानका पर्व है, इसमें जो कुछ अनावश्यक, जीर्ण-शीर्ण अनुपयोगी, कल्मषपूर्ण और निरर्थक होगा वह क्षार हो जायेगा, जो कुछ सशक्त, उपयोगी, सक्षम और आत्मवान् होगा, वह बच रहेगा। इतना ही नहीं हमारे राष्ट्रका यह अवशिष्ट ज्वालासे अविलग्न तेजस्क रूप पहलेसे कहीं अधिक भास्वर और प्रकाशपूर्ण होकर चमक उठेगा।

यह नाटक मूलतया इसी अग्नि-परीक्षाका साक्षी साहित्यिक प्रयत्न है। इसके सृजनमें दो श्रेणीकी घटनाओं और पात्रोंका संयोजन-संगठन किया गया है। अग्नि-परीक्षामें सभी मनुष्य जानकर कभी नहीं कूदते। ऐसे बहुत थोड़े और विरले लोग ही होते हैं जो अवसरकी अदृश्यगर्भ चुनौती-

को स्वीकार करके बृहत्तर मनुष्यताकी विकास-यात्रा और आत्मिक उपलब्धिके संचयनमें अपने निजत्व और अपनपौको होम करनेके लिए उद्यत होते हैं। अधिकांशके ऊपर तो इस प्रकारके अग्निकाण्ड बलात् लादे ही जाते हैं। किन्तु जलनकी पीड़ाका बोध श्रेणी-विभक्त नहीं हो जाता। यह सही है कि सचेत और सजग व्यक्ति इस ज्वालाको झेलते समय भी पीड़ाका अर्थ और अर्थका प्रकाश पाता रहता है, किन्तु बेबस-अबोध लोगोंकी ज्वलन-पीड़ा और तितिक्षा भी कम सराहनीय नहीं हुआ करती। इस अबोधता और अचेतनाके बीच भी पीड़ाकी रासायनिक प्रक्रिया अपना काम तो करती ही रहती है और एक-न-एक दिन इन अबोध आत्मकेन्द्रित विवश जलते हुए व्यक्तियोंके अन्दर भी एक उजास चमक ही जाता है जो इनके जीवनमें भी वांछित उन्नयन और तज्जन्य परिवर्तन (ट्रान्सफ़ॉरमेशन) लाकर ही चुकता है। इन दो श्रेणीके चरित्रोंका निर्धारण नाटक पढ़ते-पढ़ते पाठकके मनमें स्वतः हो जायेगा। इसी विश्वाससे इस विषयके अतिरिक्त पल्लवनका प्रयत्न अनावश्यक-सा लगता है।

घटनाओंकी भी इसी प्रकार दो श्रेणियाँ हैं। १८ नवम्बर १९६२ के मुँह-अँधेरे प्रभातमें बोमदि लापर चीनी आक्रमण एक ऐतिहासिक घटना है। उतनी ही ऐतिहासिक है तेजपुरके नागरिकोंमें व्याप्त भय और आशंकाकी स्थिति। आक्रमणके साथ-ही-साथ सीमा-क्षेत्रोंमें तोड़-फोड़की कार्यवाहीकी प्रबलता भी ऐतिहासिक महत्त्व रखती है। सड़क-निर्माण-संस्था 'टस्कर' और उसके कर्मचारियोंकी कार्यविधि अब किसीसे छिपी नहीं रह सकी है। बोमदि ला और उसके आस-पासके आदिवासियोंका शौर्य-साहस और धैर्य किसे भूल सकेगा। ये सभी घटनाएँ विदित हैं। इसीलिए ये इस नाटकके चिह्न-रक्षक यूप-दण्ड मात्र तो बनी हैं, मूल जीवन्त संघर्षका आधार-क्षेत्र नहीं। संघर्षकी मूल शक्ति तो व्यक्ति और समूहका वह दृढ़ भाव है, वह मानसिक मनोमन्थन है जो इस प्रकारके अमानुषिक कृत्योंके प्रति अपनी अबाध प्रतिक्रियामें साकार हुआ करता है। और यह संघर्ष

दूसरी श्रेणीकी उन घटनाओंमें ही दिखाई देगा, जो ऐतिहासिक नहीं, विश्वसनीय होती हैं; तथ्य नहीं, सत्य होती हैं।

चूँकि यह पूरा परिवेश बहुत व्यापक और बहुत स्थूल है इसलिए इस नाटकमें घटनाओंकी स्थूलतासे अलग होकर भिन्न-भिन्न व्यक्तित्वोंकी अन्तरात्मामें उभरनेवाले भावों और संवेगोंको ही लक्ष्यमें रखकर उनके संघर्षका चित्रण किया गया है। नाटकीय संघर्षमें सद् और असद् चरित्रों-के द्वन्द्वकी स्थिति अनिवार्य मानी जाती है! यहाँ यह असद् अदृश्य है, सिर्फ़ उसके सर्वत्र फैले कुकृत्य ही उसके व्यक्तित्वका निर्माण करते हैं। यह अदृश्य असद् अपनी पूरी बीभत्स गहराइयों और पहलुओंके साथ इस नाटकके चरित्रोंके माध्यमसे अनुभवगम्य हो सके, इसका प्रयत्न किया गया है। चूँकि यहाँ दुष्ट और उसके कुकृत्य एक बहुत बड़े संकटका पर्याय बन गये हैं, इसी कारण उसके जूझनेवाले चरित्रोंमें व्यक्तिगत इकाईकी पीड़ा और असहायताका भी बोध उभरता है, जो इस प्रकारके युद्धोंकी अनिवार्य उपज है। इसीसे इन चरित्रोंके त्याग, शौर्य और संघर्षमें आदर्शवादिता भी दिखेगी; किन्तु हमें यह हमेशा याद रखना चाहिए कि ऐसे संहारक संकटों-में जूझनेवाले चरित्रोंका आदर्शवाद मात्र आदर्शवाद न होकर जीवनका सत्य हो जाता है। संकट ही मनुष्यके मूल्योंकी कसौटी होता है और इस-पर खरे उतरनेवाले इनसानोंका स्वाभाविक सामान्य चरित्र भी इतना महान् होता है कि आदर्शकी ऊँचाईको छूने लगता है। इसलिए ऐसे चरित्रोंके सही परिवेश और उनके संघर्षकी तमाम परिस्थितियोंको दृष्टिमें रखकर ही आदर्श-यथार्थके निर्णयका प्रयत्न करना चाहिए।

यह नाटक कुल तीन दृश्यों और तीन अंकोंमें सीमित है। रंगमंचकी सुविधाकी दृष्टिसे नाटकोंकी आधुनिक पद्धति 'थ्री ऐक्ट्स; थ्री सीन्स' का यहाँ अनुसरण किया गया है। रंगमंचकी समूची आवश्यकताओंको ध्यानमें रखकर उपस्थाप्य वस्तुकी सांगोपांग अभिव्यक्तिके लिए हर सम्भव प्रयत्न किया गया है। वस्तुके स्वभाव और वातावरणके अनुकूल प्रतीकों, संकेतों

और निर्देशन-अभिप्राय-व्यंजक बिम्बोंका प्रयोग किया गया है। रंग और प्रकाशकी व्यवस्थाओंका यत्किंचित् संकेत निःसन्देह उनके लिए नहीं है जो अभिनय और मंचकी सूक्ष्मताओंसे परिचित हैं।

चीनी आक्रमणने आज हमारे साहित्यकारों और प्रबुद्ध पाठकोंको एक-जैसा ही उद्विग्न कर रखा है। इस आघातसे उत्पन्न प्रतिक्रियाने सहस्रों छोटी-मोटी कृतियोंको जन्म दिया है। कुछमें उच्छ्वास है, कुछमें नारे-बाज़ी। अनेक लोगोंने यह आशंका व्यक्त की है कि इस प्रकारकी फ़ैशन-प्रेरित रचनाओंका क्या मूल्य है। यह हमारी विवेक-शक्तिकी स्वस्थताका ही सूचक है कि हम संकटके क्षणोंमें भी साहित्यिक मानदण्डको झुकाने या लचीला करनेके पक्षमें नहीं हैं : ऐसे सभी प्रबुद्ध पाठकोंसे निवेदन है कि इस नाटकको अपनी पूरी बौद्धिक चेतना, सतेज जागरूकता और साहित्यिक मान्यता-मानदण्डकी अर्गला और कवचसे संयुक्त होकर ही पढ़ें, तभी वे इसके वास्तविक रूपको समझ सकेंगे। तभी वे जान पायेंगे कि कोरे निरर्थक उच्छ्वास और सचेत पीड़ाकी सार्थक सांकेतिक अभिव्यक्तिमें क्या अन्तर होता है। अस्तु !

इस नाटकके सृजनके दिनोंमें इसे शीघ्र पूरा करनेके लिए मेरे कलाकार मित्र श्री रामचन्द्र शुक्ल, श्री महेन्द्रनाथ सिंह तथा नाट्य-कलाकार श्री अवधबिहारीलालका जो सौजन्यपूर्ण आग्रह रहा, उसके लिए मैं इन सभीको धन्यवाद देता हूँ।

अन्तमें एक निवेदन और। इस नाटकके किसी भी प्रकारके व्यावसायिक-अव्यावसायिक उपयोगके पहले लेखक और प्रकाशककी लिखित अनुमति ले लेना अत्यन्त आवश्यक है ! अलम्।

—शिवप्रसाद सिंह

हिन्दी-विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
चैत्र नवरात्र, २८ मार्च'६३

ये लोग !

विवेक कुमार रॉय : एक प्रसिद्ध समाचार संस्थाका संवाद-प्रतिनिधि ।

रोज़ ओ'ब्राएन : तेजपुरके एक मिशन-स्कूलकी ऍग्लो-इण्डियन टीचर ।

कैप्टेन मोहन सिंह : सैनिक गुप्तचर-विभागका अधिकारी ।

शीकू [शि क्यू] : कामेङ् डिवीज़नका एक आदिवासी वृद्ध ।

फ़ादर पिण्टो : तेजपुरके एक कैथोलिक मिशनका पादरी ।

क्यूला : कामेङ् डिवीज़नकी एक आदिवासी युवती ।

डैनियल ओ'ब्राएन : रोज़के पिता ।

मुकुल : चीन-भक्त एक भारतीय ।

गोपाल शर्मा : तेजपुरके होटलका प्रमुख बेयरा ।

करतार सिंह : होटलका मालिक ।

तथा

चीनी जादूगर और उसका शिष्य, कॅन्फ़्यूशियस, तथागत बुद्ध, कार्ल मार्क्सकी आत्माएँ, सैनिक, बेयरे, वृद्ध, ओल्या, टूरां, रामसिंह, बख़्तावर, एक दम्पति और उनका छोटा बच्चा आदि लघु पात्र ।

■

There is no despair so absolute as that which comes with the first moments of our first great sorrow, when we have not yet known what it is to have suffered and be healed, to have despaired and have recovered hope.

—*George Eliot*

घाटियाँ गूँजती हैं

• •

अंक एक : दृश्य एक

[परदा उठता है : तेजपुरके एक होटलका बरामदा। होटलके निचले बरामदेसे हिमालयकी चोटियों और हरियालीसे ढँकी पहाड़ियोंका दृश्य बहुत आकर्षक प्रतीत होता है। इसी दृश्यके आकर्षणसे बरामदेको चायघर-में बदल दिया गया है। बरामदेका सामनेका हिस्सा दो गोल-गोल खम्भियों-पर मेहराबें डालकर बना हुआ है। इस तरह सामनेके भागमें कुल तीन दरवाज़े हैं। बीचका दरवाज़ा प्रायः खुला रहता है। अग़ल-बग़लके दोनों दरवाज़ोंपर हरे रंगके हलके परदे लटक रहे हैं। बीचवाला दरवाज़ा ही होटलमें आने-जानेका मुख्य द्वार है। दरवाज़ेके सामने सड़कनुमा एक गलि-यारा है, जिसपर इधर-उधर आते-जाते खोमचेवालोंकी आवाज़ें रह-रहकर सुनाई पड़ जाती हैं। बीचवाले दरवाज़ेके ऊपर एक साइनबोर्ड है जिसपर लिखा है : स्नोह्वाइट होटल, तेजपुर। ज़ाहिर है कि यह बोर्ड किसीने बाहरसे उतारकर भीतरकी तरफ़ लगा दिया है। बरामदेमें बीचोबीच एक गोल मेज़ है, जिसके इर्द-गिर्द कई कुरसियाँ पड़ी हुई हैं। अग़ल-बग़लके दरवाज़ोंके साथ भी एक-एक मेज़ और तीन-तीन कुरसियाँ हैं।

सामनेके दरवाज़ेसे एक नवयुवक प्रवेश करता है। एक बेयरा गोपाल शर्मा हाथमें झाड़न लिये कुरसी-मेज़ें साफ़ कर रहा होता है। चायघरका मालिक करतारसिंह एक अधेड़ सिक्ख है। पतला-दुबला, मझोले क़दका।

नवयुवक दरवाज़ेसे घुसकर दायें दरवाज़ेसे लगी मेज़के पास जाकर बैठ जाता है। यह पचीस-छब्बीसका नवयुवक है। भरे-भरे शरीरका, अँगरेज़ी ढ़ंगसे कपड़े पहने हुए हाथमें चमड़ेका ज़िपवाला ब्रीफ़केस है जिसे

वह सहज लापरवाहीसे मेज़पर डाल देता है। नवयुवकका नाम विवेक-कुमार रॉय है और वह एक प्रसिद्ध समाचार संस्थाका संवाद-प्रतिनिधि है जो चीनी आक्रमणकी ख़बरें 'कवर' करने तेजपुर आया हुआ है।]

गोपाल : [सामने लगे साइनबोर्डको उतारकर साफ़ करता है] हुँह्, पता नहीं इसे कौन चुराये ले जाता था बाहरसे कि उतरवाकर भीतर टँगवा दिया [गोपाल साइनबोर्ड लेकर बीचवाले दरवाज़ेसे बाहर जाता है और मुड़कर दरवाज़ेके ऊपर उसे टाँग देता है।]

विवेक : शर्मा !

गोपाल : जी सरकार ! आज तो कुछ पहले ही आ गये बाबू ? क्या टाइम होता होगा, सरकार ?

विवेक : क्यों ? सवा बज रहा है। [घड़ी देखता है।]

गोपाल : मुझे लगा आज शायद कुछ पहले आ गये आप।

विवेक : ऐं ? यह परदा तो खींचना शर्मा [दायें दरवाज़ेपर लटके परदेकी ओर तर्जनीसे संकेत करता है] और ज़रा एक कप चाय भी लाना।

गोपाल : अभी सरकार ! [शर्मा बारी-बारीसे दोनों दरवाज़ोंके पास जाकर उनका परदा सरका देता है। सामने हिमालयकी चोटियोंका दृश्य पूरे सौन्दर्यके साथ निखर उठता है। विवेक चुपचाप इन चोटियोंको देखता है। गोपाल बाहर चला जाता है।

विवेक : हिमालय ! पर्वतराज हिमालय !! हमारी सभ्यता और संस्कृतिकी आधारशिला हिमालय ! दोपहरकी भी धूपमें ये चोटियाँ कितनी सुन्दर लगती हैं। इसी सौन्दर्य

और भव्यताको देखकर तो लोगोंने हिमालयको देवताओंका घर कहा था। हिमालय एक विशाल अधलेटा देवता ही तो है, श्वेत गौरांग महादेवका स्वरूप।

[सहसा चोटियोंके पीछेसे, प्रतिध्वन्यात्मक लहरीमें कालिदासकी हिमालय-वन्दनाके निम्न श्लोक उभरने लगते हैं। साथ ही गम्भीर किन्तु धीमे-धीमे शंख-ध्वनि भी अविरल गतिसे गूँजती होती है। बीच-बीचमें मानो ध्वनि-पटपर बड़े-बड़े बेल-बूटे टँके हों, इस तरह घण्टेका नाद भी गूँजता जाता है। विवेक दोनों हाथोंमें ठोड़ी टेके बैठा रहता है, मानो वे स्वर-ध्वनियाँ कहीं बाहरसे नहीं, उसकी अन्तरात्मासे ही उभर रही हैं।]

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥
यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सं मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे।
भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम्॥
अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य हिमं न सौभाग्यविलोपि जातम्।
एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः॥

[वन्दना समाप्त हो जाती है। विवेक अपनी कुरसीपर सीधा होता है।]

विवेक : भले ही हमारे पढ़े-लिखे वर्गको कालिदासके ये श्लोक अब याद न हों, पर देशकी साधारण जनता तककी अन्तरात्मासे देवतात्मा हिमालयकी प्रार्थनाके ऐसे अनेक भाव निरन्तर फूटते रहते हैं। न जाने कितने तीर्थ इन चोटियोंके नीचे घाटियोंमें जागृत बने हैं। न जाने कितने रमणीय स्थल यहाँ पग-पगपर सजे हैं। न जाने कितनी

पवित्र नदियाँ और झरने हैं जो इसके आँचलपर अठ-खेलियाँ करते बहते रहते हैं। सुदूर कन्याकुमारीसे, विन्ध्यक्षेत्रसे, गुजरात और बंगालसे यात्रियोंकी पाँतें कन्धोंपर पवित्र जलकी काँवरें लादे हिमालयके चरणोंकी अर्चना करने प्रति वर्ष आती हैं।

[परदेपर यात्रियोंकी अनेक छाया-मूर्तियाँ उभरती हैं। मानो नर-नारी जल-भरी काँवरें लिये हिमालय-यात्राको जा रहे हैं। नेपथ्यसे यात्रियोंके कीर्तनकी ये पंक्तियाँ समवेत स्वरमें गायी जाती हैं—]

कखन हरब दुःख मोर हे भोलानाथ।
कखन हरब दुःख मोर॥
भन विद्यापति, मोर भोलानाथ गति।
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ।
कखन हरब दुःख मोर॥

विवेक : हाँ, मिथिलाका ही यात्री-मण्डल था वह, बदरी-केदारकी यात्रापर जाते हुए उनके इस कीर्तनको सुनकर हम सभी पत्रकार एक क्षणके लिए जैसे मन्त्रमुग्ध हो गये थे। कितनी तल्लीनता थी उनके गानमें!

[सहसा अनेक राइफ़लों, तोपों, मॉर्टर्स और अन्य युद्धास्त्रों-की गड़गड़ाहटसे हिमालयकी शान्त स्तब्ध चोटियाँ जैसे चीत्कार कर उठती हैं। बरफ़ीली चोटियोंके पीछेसे आगकी लपटें उठने लगती हैं।]

विवेक : आह, आज वही हिमालय शान्त, और पवित्र हिमालय, जल रहा है। विश्वासघाती चीनियोंके कुचक्रसे हिमालय-का भाल···।

[सहसा गोपाल शर्मा हाथमें चाय लिये आता है ।]

गोपाल : विवेक बाबू, क्या बड़बड़ा रहे हैं ? किसका माल···· ।

विवेक : [जैसे सिहरता है] ऐं, हाँ····, चाय लाये हो ? रख दो गोपाल ।

[गोपाल चायका प्याला रख देता है]

गोपाल : बाबू, इन पहाड़ोंमें इस तरह आप क्या देखते रहते हैं ? जब भी आप इन पहाड़ोंको देखते हैं, बड़बड़ाने लगते हैं।

विवेक : कुछ नहीं शर्मा, मैं चीनियोंके इस जघन्य हमलेके बारेमें सोच रहा था । इन नीचोंके कारण हमारे हिमालयका भाल क्या शर्मसे झुक नहीं गया है शर्मा ?

गोपाल : आप भी बाबू कैसी-कैसी बातें करते हैं ! हिमालय पहाड़ है सरकार, पहाड़ । पहाड़ नहीं; पहाड़ोंका राजा । इतना विशाल, इतना ऊँचा । यह कभी झुक सकता है सरकार ? झुक तो आदमी जाते हैं बाबू, जो थोथे स्वार्थोंको लेकर आपसमें लड़ते-झगड़ते रहते हैं और इस पहाड़से कुछ नहीं सीखते । [गोपाल चाय रखकर चला जाता है ।]

विवेक : कैसा निर्भीक और निडर है यह व्यक्ति भी····सुना पिछले दिनों यह अकेले ही अड़तालीस घण्टे तक फ़ौज़ी सिपाहियोंको चाय बाँटता रहा, जब कि तेजपुरके तमाम चायघर डरके मारे बन्द हो गये थे ! बातें भी कैसी-कैसी कहा करता है । सुननेमें सरल, समझनेमें कठिन ।

[दरवाज़ेके सामनेकी सड़कपर रिक्शे-मोटरोंका ताँता लगा हुआ है । साधारण भीड़ और कोलाहल-सा । खिलौने

बेचनेवाले, खोंमचेवाले तथा दूसरे हॉकर्स अपनी आवाज़ें लगाते इधरसे उधर निकल जाते हैं। धीरे-धीरे चायघरमें भीड़ बढ़ने लगती है। चारों तरफ़ खासी चहल-पहल और खुशी-सी दिखाई पड़ती है। विवेककुमार अपने पत्रकार-कुतूहलमें सहज ही आँखें उठाकर आस-पास देखता है। कोनेकी मेज़पर एक युवती बैठी है बीसेककी। उसके बाल ऐंग्लो-इण्डियन लड़कियोंकी तरह कटे हैं, शालीन प्रकारका नीची स्कर्टवाला कपड़ा और प्लैटफ़ॉर्म हील्सका सैण्ड्ल पहने है। पासकी कुरसीपर एक छोटी-सी लड़की बैठी है जिसकी आकृति नेफाके आदिवासियों-जैसी है। एक बिस्किट धीरे-धीरे कुतरती वह खा रही है और डरी-डरी उदास आँखों इधर-उधर देख रही है। चारों तरफ़ बैठे लोग हँसते-चहकते गपबाज़ी कर रहे हैं। अचानक वहाँके इस वातावरणमें कहींसे वायॅलिनकी व्यथा-मिश्रित स्वर-लहरी रह-रहकर व्याप्त होने लगती है। जैसे स्वर-लहरी हिमालयकी चोटियोंसे ही आ रही हो, क्योंकि उसके साथ ही पछुवाका तेज़ झकोरा भी चायघरमें आता है और वहाँ बैठे सभी जनको सिहरा देता है। लोग हँसते-से एकदम चुप हो जाते हैं, पर दूसरे ही क्षण उस स्वर-लहरीको जैसे दुःस्वप्नकी तरह भुलाकर फिर अपने आमोद-विनोदमें उतरने लगते हैं। सामने रेडियोसेट रखा है, बाङ्ला-फ़िल्मी गीत 'भूल शॅबी भूल' उसपर चल रहा है। सहसा घरघराहटकी आवाज़ होती है और रेडियोसे कोई बोलता हुआ सुनाई पड़ता है—]

यह आकाशवाणी है। दोपहरके एक बजकर चालीस

मिनिट हुआ चाहते हैं। अब आप हिन्दीमें समाचार सुनिए।

[समाचारोंकी पृष्ठभूमिमें नेपथ्यसे लगातार वायॅलिनकी काँपती-काँपती आवाज़ आती रहती है।]

सुरक्षा मन्त्रालयके एक प्रवक्ताने आज बताया कि चीनी सेनाएँ से लाको एक बग़लसे काटकर आगे बढ़ आयी हैं। बोमदि ला और से ला दोनोंको जोड़नेवाली सड़क बीचसे काट दी गयी है। बोमदि ला बस्तीपर चीनी सेनाओंका दबाव बढ़ रहा है। प्रधान मन्त्रीने आज लोकसभामें भाषण देते हुए जनतासे अपील की कि जनता धीरजसे काम ले और शत्रुसे देशकी चप्पा-चप्पा भूमि छुड़ा लेनेके लिए कमर बाँधे रहे। उन्होंने अन्तिम साँस तक शत्रुका सामना करनेकी शपथ फिर दोहरायी।

[जैसे पूरे चायघरमें सक़ता छा गया हो। लोग एकके-बाद-एक काउण्टरपर जाकर पैसे गिनते और चुपचाप बाहर निकलते जाते हैं। सड़कपर रबरकी पपीहरी बेंचने-वाला फुगेमें पूरी फूँक भरता है : पपीहरीसे एक रोनी-सी आवाज़ ही उठती है। इसे भी वह बीचमें दबा देता है, जैसे रोते हुए बच्चेका गला घोंट दिया जाये। विवेकके सामने बैठे दम्पति घबड़ाकर उठ जाते हैं। पति आँखों-ही-आँखों पत्नीको कुछ इशारा करता है। वह बच्चेका हाथ पकड़कर जैसे ज़बरदस्ती उठाती है।]

बच्चा : [ठुनककर रोते हुए] मम्मी, बिस्किट और····मलाई बिस्किट····मम्मी !

माँ : घर चलो [पुचकारती है] वहीं ढेर-सी देंगे।

बच्चा : [वैसे ही ठुनकता हुआ] नहीं मम्मी····हम तो यहीं लेंगे····मलाई बिस्किट ! मम्मी !

माता-पिता : [दोनों] ज़िद नहीं करते मुन्ना ! [पिता बच्चेका हाथ पकड़कर उठाता है ।] आओ चलें ।

बच्चा : [हठ करते हुए] डैडी····पहले बिस्किट; हम तो लेंगे ! [पिता खीजकर उसके गालपर एक थप्पड़ देता है ।]

पिता : ले···बिस्किट ! [फिर झटकेसे उसे उठानेके लिए खींचता है ।]

विवेक : बच्चेको क्यों मारते हैं भाई साहब ? वह बेचारा क्या जाने कहाँ क्या हो रहा है ।

पिता : माइण्ड यॅर बिज़िनेस मिस्टर !

विवेक : अच्छा ।

[माता-पिता दोनों रोते हुए बच्चेको खींचते हुए, काउण्टर-पर पैसे डालकर बाहर चले जाते हैं ।]

विवेक : अजीब लोग हैं ! [फिर वह दोनों कुहनियाँ मेज़पर रखे, जुड़ी हुई कलाइयोंपर हथेलियोंके बीच ठोड़ी टिकाये, कुछ सोचने लगता है । एक तरफ़को बैठी वह ऐंग्लो-इण्डियन युवती, स्वेटर बुनती होती है और यह घटना देखकर हलकेसे मुसकराती है । होटलका मालिक करतारसिंह मेज़ें साफ़ करानेके लिए अपनी गालियोंसे रंगीन भाषामें एकके-बाद एक बेयरोंको पुकारता है—]

करतारसिंह : ओये सोहना ! सोहना आये !···कित्थे मर गया सौरीदा····ओये कल्लू !···फ़तेसिंगा !····पूतनी दे सब मर गे, ओये····

सोहनसिंह : [डरा-डरा-सा पास आकर] कल्लू और फ़तेसिंह तो भाग्गे जी।

करतारसिंह : पाग् गे ! [झल्लाते हुए] रब्ब ग़ारत करे इनाँ नूँ !··· देख पुत्तर किचण द विच्च चा-शा···

[करतारसिंहका ध्यान सामनेके दरवाज़ेसे प्रवेश करते कैप्टेनकी ओर चला जाता है। सोहनसिंह बरामदेमें-से होते हुए भीतर किचेनकी तरफ़ न जा अपना कोट लेकर धीरेसे बग़लके दरवाज़ेसे कहीं खसक जाता है। कैप्टेन तीस-पैंतीसकी उम्रका हट्टा-कट्टा और इण्टेलेजेण्ट व्यक्ति है। सैनिक वेशमें है, सीनेपर कई रिबन सजे हैं। विवेकपर नज़र पड़ते ही, टोप वहीं मेज़पर रखते हुए –]

कैप्टेन : हेलो विवेक, मिस्टर विवेककुमार रॉय जर्नलिस्ट, आप यहाँ छिपे-से बैठे क्या कर रहे हैं भाई ?

विवेक : आइए कैप्टेन साहब आइए। [पास पड़ी कुरसीकी तरफ़ इशारा करता है] यहाँ छिपकर मुर्ग़-मुर्ग़ी और चूज़ोंकी लड़ाईका तमाशा देख रहा हूँ। आपको भी कुछ शौक़ है क्या ?

कैप्टेन : माफ़ कीजिएगा विवेक साहब, मैं तो मुर्ग़ी और अण्डेके सम्बन्धका क़ायल हूँ मुर्ग़ी और चूज़ोंके नहीं। आइए इसी बातपर एक-एक ऑमलेट चल जाये। हाँ जी करतार-सिंह, दो सिंग्ल ऑमलेट और चाय देना; जल्दी।

करतारसिंह : ऑमलेट ? अण्डे तो सब चूज़े होकर उड़ गये साब, ऑमलेट कहाँसे लाऊँ ? साढे बैरे पाग गे, होर गोपाल समाण लाणे बज़ार गया ऐ जी !

कैप्टेन : अच्छा, यह बात है ! मगर सरदार, चूज़े सब ग़ायब हो गये तो तुम यहाँ कैसे ?

करतारसिंह : जी मैं चूज़ा नहीं, मैं बाज़ हूँ । आहो जी !

कैप्टेन : बाज़ ? ख़ूब कही ! मगर शिकार कौन-सा है निशानेमें सरदारजी ?

करतारसिंह : चीनो बगले हुज़ूर, लम्बी गरदनवाले चीनी बगले ! [बगुलेकी नक़ल उतारता है; सब हँसते हैं ।]

कैप्टेन : बात तो ठीक कहते हो । क्यों मिस्टर विवेक ?

विवेक : कुछ समझमें नहीं आता कैप्टेन । इन चीनियोंकी भाषा समझसे बाहर हो गयी है ।

कैप्टेन : [चौंकता हुआ] मतलब ?

विवेक : मतलब कि हमने दोस्तीका हाथ बढ़ाया, इन्होंने हाथरप थूक दिया । हम इनके लिए सब कहीं बद्दू बने, इन्होंने बदलेमें यह हमारे ही ऊपर हमला बोल दिया । बात शान्तिकी करते हैं, काम राइफ़लका ! पंचशीलकी शपथ और मित्रकी ही पीठमें छुरा ! कैप्टेन, इन्हें कोई पूछता नहीं था तब हमने आदर दिया, सम्मान दिया···· 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई'के नारोंसे धरती और आसमान भर दिये ! और इन्होंने ? इन्होंने हमारी सचाई और शिष्टताको हमारी कमज़ोरी मानकर हमें ठोकर मार दी ! कैप्टेन, ऐसा जघन्य आचरण एक सभ्य देश शायद ही कर सके । मुँहमें 'जनताका हित' और मनमें साम्राज्य-लिप्सा और चंगेज़ख़ानी !

कैप्टेन : [गम्भीर हो जाता है] इसपर भी चीनी रेडियो पुकारता

है कि भारतने हमारे ऊपर हमला किया, हमारे देशका कितना ही भाग दबा लिया, हमारे ऊपर अत्याचार कर रहा है, हम केवल अपनी दोनोंकी मैत्रीकी ही सोचकर चुप हैं····नहीं तो [हाथ फैलाकर मुँह बिचकाता है]

विवेक : नंगा विश्वासघात है यह कैप्टेन, नंगा विश्वासघात ! आज ही नहीं, बीती सदियोंके भी इतिहासमें ऐसा नहीं हुआ कहीं । [कैप्टेन एक गहरी साँस छोड़ता हुआ सिर हिलाता है] याद है, उस दिन नेहरूजीने कितने दर्दके साथ कहा था कि चीनकी इस हरकतसे तो एक भारी क्राइसिस ऑव कॉन्फ़िडेन्स, विश्वासका संकट, पैदा हो गया है। हम समझ ही नहीं पाते कि किसी ज़िम्मेदार राष्ट्रके नेताओंसे बात कर रहे हैं या हर क़ायदे-क़ानूनको ठोकर मार देनेवाले डाकू-लुटेरोंसे ।

कैप्टेन : हाँ, मगर मुश्किल तो यह है कि अपने देशवाले भी तो अजीब हैं । एक मिनिटमें इनका उत्साह आसमान छूने-छूनेको हो जाता है, तो दूसरे ही मिनिट लपटें सिमट-सिकुड़कर धुँधुवाने लगती हैं—यह क्या एक सशक्त देशके लक्षण हैं ?

विवेक : इसमें दोष जनताका उतना नहीं है भाई, जितना हम-आप-जैसे पढ़े-लिखे लोगोंका ।

कैप्टेन : सो कैसे ?

विवेक : सो ऐसे कि जनता बातोंकी गहराईमें न जाना चाहती है न जा सकती है, उसे समझाना और ठीक राहपर रखना बुद्धिजीवियोंका काम है – और हमारे बुद्धिजीवी तो कटे हुए सिर हैं जो थोथी शानकी ललकमें किसी जादूगरके

इशारोंपर नाचते हैं, रटी हुई ऊँची-ऊँची बातें सुएकी तरह दोहराया करते हैं। जनता भेड़ : बुद्धिजीवी भेड़िये—बस। चाय-घरों और कॉफ़ी-हाउसोंमें बैठकर दर्शन बघारना ही हमारा काम हो गया है। तब बेचारी जनता क्या करे !

कैप्टेन : आपका मतलब हमारे 'इण्टलेक्चुअल्स' जनताको गुमराह कर रहे हैं ?

विवेक : कर नहीं रहे, करते आ रहे हैं। मगर एक बात गाँठ बाँध लीजिए कैप्टेन, कि हमारी जनता कटा हुआ कबन्ध भले हो, संकटकी घड़ीमें यह सदा अचल दीवार-सी खड़ी मिलेगी—[ज़रा आगेको झुककर और धीमे स्वरमें एक-एक शब्दपर ज़ोर देते हुए] यदि केवल बुद्धिजीवी उसका साथ दें। [विवेक दो क्षणको रुकता है, जैसे एक साँस लेता हो या जैसे चाहता हो कि बात कैप्टेनके जीकी तह तक बैठ जाये। कैप्टेन बड़ी गम्भीर मुद्रासे सिर हिलाता है, एक क्षण सामनेकी सड़ककी ओर देखता है और फिर उसकी निगाह उधरकी पहाड़ियोंपर फिरती हुई जैसे उसके भीतरको डूब चलती है। विवेक उसकी खोयी-खोयी-सी आँखोंमें आँखें डालता एक-एक शब्दपर भार व्यक्त करते हुए आगे कहता है]—माइ डियर कैप्टेन, कालीसे काली रातमें भी जनताके विश्वासका ध्रुव कभी धूमिल नहीं होता, यदि केवल उसे भरोसा हो कि उसके नेता, उसके शासक, और समाजका बुद्धिजीवी वर्ग उसके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाये खड़े हैं।

कैप्टेन : ठीक कहते हो मिस्टर विवेक, ठीक कहते हो।

विवेक : हाँ कैप्टेन, और ठीक यह भी कहता हूँ कि जनताको इसका उलटा अनुभव हुआ नहीं कि अगले ही क्षण यह जगाया हुआ भस्मासुर फिर साक्षात् प्रलय ही बनता है! जनताको जगाना सरल है, उसे सही दिशामें लगाये रखना दूरदर्शी और साहसी नेतृत्वसे ही सम्भव है।

[थोड़ी देरको वहाँ मौन-सा छाया रहता है। विवेक चुप कैप्टेनको देखता है, कैप्टेन मेज़पर आँखें गड़ाये न जाने कहाँ देखता और क्या सोचता होता है। सहसा जैसे भीतर कहीं 'ऐटेन्शन' ऑर्डर हुआ हो, इस प्रकार कैप्टेन झटकेके साथ सावधान होता है]

कैप्टेन : ख़ैर, आपने क्या तय किया मिस्टर विवेक ?

विवेक : मैंने ? किस बारेमें ?

कैप्टेन : दिल्ली लौटनेके बारेमें। यहाँ तो ख़तरा बढ़ता ही जा रहा है न। यहीं देखिए, एक क्षण पहले यहाँ सब कहीं क़हक़होंका चमन था, और अब ? जैसे वीरान सुनसान खण्डहर हो !

विवेक : [हलकेसे हँसता है] आपको तो कैप्टेन कवि होना चाहिए था।

कैप्टेन : ज़रूर ! [कुछ झेंपता-सा है। फिर उठनेको होता है] अच्छा चला; दिल्ली लौटनेके लिए मेरी कुछ मददकी ज़रूरत हो तो कहें।

विवेक : मदद तो एक चाहिए कैप्टेन, यदि दे सकें।

कैप्टेन : [मुसकराता है] मैं पहले ही समझता था मिस्टर विवेक। बुद्धिजीवियोंके कर्तव्यपर भाषण देना एक बात है और

उसे अमलमें ले आना दूसरी। बोलिए, बोलिए, व्हॉट कैन आइ डू फ़ॉर यू!

[विवेक सामने पड़ा अपना ब्रीफ़केस खोलकर एक लिफ़ाफ़ा निकालता है और एक गम्भीर मुसकराहटके साथ उसे कैप्टेनकी ओर बढ़ाता है। कैप्टेन लिफ़ाफ़ेमें-से काग़ज़ निकालकर पढ़ता है। विवेक सिर झुकाये उसी प्रकार मुसकराते हुए ब्रीफ़केसकी ज़िप खींचता खोलता रहता है।]

हूँऽऽ, तो आप भी मामूली मुश्किल-पसन्द आदमी नहीं। रहस्य 'क्रिएट' करनेमें तो आप चीनियोंको भी मात दे सकते हैं। लेकिन एक-ब-एक आपको यह सूझी क्या? कल तक तो आपको अपनी बीमार बूढ़ी माँकी फ़िक्र थी। आप दिल्ली लौट जानेकी कह रहे थे, और आज एकदमसे....

विवेक : [बीचमें बात काटकर] शैतान बन बैठे? [हँसता है।]

कैप्टेन : जी! यह मिलिट्री-दफ़्तरसे परमिट लिये बैठे हैं कि आप बोमदि ला जा रहे हैं। [वह लिफ़ाफ़ा उसे लौटाता है] मगर जानकर जोखिममें फाँदनेकी यह उलटी अक़्ल आयी कहाँसे?

विवेक : क्या सचमुच कैप्टेन मेरी अक़्ल उलटी लगती है आपको?

कैप्टेन : [मन-ही-मन आदर भाव लिये उसके दोनों हाथ अपने हाथोंमें लेता है।] अरे नहीं दोस्त, मैं तो हँसी कर रहा था। सच पूछो तो आपके इस इरादेने मेरी आँखोंके सामनेसे एक परदा-सा खींच दिया है। बोलो भाई, मैं आपकी क्या मदद कर सकता हूँ?

विवेक : जीप चाहिए; हो सकेगा इन्तज़ाम?

कैप्टेन : क्यों नहीं, क्यों नहीं। तुम हमारे वीर सैनिकोंके रक्तसे अंकित देशभक्तिकी आँखों-देखी छवियाँ इकट्ठी करनेके लिए अपने प्राणोंकी बाज़ी लगाने सीधे मोर्चेपर जा रहे हो, और मैं तुम्हारी यह छोटी-सी मदद नहीं कर सकता? बन्धु, यह स्वतन्त्र भारतका पहला युद्ध है। इस युद्धका एक-एक सैनिक अपनी मातृभूमिके मान-सम्मानका पहरेदार है···सैनिक, नेता, शासक, पत्रकार, लेखक, किसान, मज़दूर, और व्यापारी—ये सब जैसे अलग-अलग डिपार्टमेण्ट हैं, मगर अधीन एक ही हेडक्वॉर्टरके हैं और वह हेडक्वॉर्टर है मातृभूमि! जीप ज़रूर मिलेगी, मैं अभी कहींसे भिजवाता हूँ।

विवेक : थैंक्स, कैप्टेन थैंक्स! [गद्गद मुद्रामें मिलानेके लिए हाथ बढ़ाता है।]

[कैप्टेन आदर-भावके साथ हाथ मिलाकर चलनेको होता है कि पास बैठी वह ऐंग्लो-इण्डियन युवती उठकर उसकी ओर बढ़ती है। आदिवासी बेबी भी उसके साथ है। विवेक उन्हें देखता रहता है।]

युवती : ज़रा सुनिएगा?

कैप्टेन : [बढ़ते पैरोंको रोककर घूमता है] जी? आपने बुलाया?

युवती : जी हाँ।

कैप्टेन : कहिए? [उड़ती नज़र अपनी कलाई-घड़ीपर डालता है।]

युवती : [बड़े संकोचके साथ] इन साहब [विवेकको ओर संकेत करती है] के साथ ही उस जीपपर मेरे भी बोमदि ला जानेमें मदद कर सकते हैं क्या?

[विवेक चकित होता है।]

कैप्टेन : [आश्चर्यसे] जी !

युवती : मैं भी बोमादि ला जाना चाहती हूँ कैप्टेन, प्लीज़····आइ शैल बी वेरी ग्रेटफुल ।

कैप्टेन : मैडम, आप कहीं—एक्सक्यूज़ मी—पागल तो नहीं हो गयी हैं ? आप समझती हैं मिस्टर विवेक वहाँ पिकनिकपर जा रहे हैं ?

युवती : [घबराहट, संकोच और दृढ़ता मिश्रित स्वरमें] आ' ऐम सीरियस कैप्टेन । मैंने अभी-अभी बोमदि लामें चीनियोंके हमलेकी रेडियोन्यूज़ भी सुनी हैं । बट माइ पापा··· पापा···कैप्टेन, सेव माइ पापा, प्लीज़···! [सिसककर रोने लगती है ।]

कैप्टेन : [घबराकर] अरे रे···आप तो रोने लगीं । साफ़-साफ़ कहिए क्या हुआ आपके पापाको । कहाँ हैं वह ? घबराइए नहीं । मैं भरसक आपकी मदद करूँगा····

[कैप्टेन विवेककी ओर इस प्रकार देखता है मानो कहता हो कि यह अजीब परेशानी बीचमें आयी ।]

युवती : [अपनेको सँभालते हुए काँपती आवाज़में] मेरा नाम रोज़ है, मिस रोज़ ओ'ब्राएन । आ' ऐम ए टीचर इन द मिसन स्कूल हियर । पापा बोमदि लामें रहते हैं । वहाँ उनका एक फ़ॉर्म है । ईडेन टर्मिनसके पास ही बंगला है । मैंने उनसे बार-बार कहा कि अब तेजपुर आ जायें, मगर वह अपनी हठपर अड़े हैं । [रोज़ सुबकती-सी है ।]

कैप्टेन : कैसी हठ ?

रोज़ : कहते हैं कि इन हूणोंके डरसे क्या अपनी धरती छोड़

दूँगा ? बूढ़ा हुआ, प्रभु यदि इसी तरह मेरी मौत चाहते होंगे, तो वही हो ! [विवेकको आँखोंमें चमक-सी आ जाती है ।]

कैप्टेन : फिर आप वहाँ जाकर भी क्या करेंगी । मिस रोज़ ?

रोज़ : आइ शैल बेग ऑव पापा टू हियर मी, कैप्टेन । पापाको धरती प्यारी है, मुझे पापा । पापाको छोड़ मेरा कौन है और ! हेल्प मी कैप्टेन, आइ शैल वि वेरी ग्रेट फ़ुल । प्लीज़ !

कैप्टेन : देखिए मिस रोज़, आपकी भावनाएँ मैं समझता हूँ । यू हैव माइ सिम्पैथीज़ । लेकिन वहाँ जानेका विचार आप छोड़ दें । मिस्टर विवेक [विवेककी ओर संकेत करता है] जा रहे हैं, आप इन्हें सब समझा दें । यह आपके पापाको वहाँसे ले आनेकी पूरी कोशिश करेंगे ।

रोज़ : पापाको आप नहीं जानते कैप्टेन; वे ऐसे किसीकी नहीं मानेंगे । सच कैप्टेन····

कैप्टेन : [बीचमें ही] आप तो मुझे धर्मसंकटमें डाल रही हैं मिस रोज़ ।

रोज़ : ठीक है, जैसी प्रभुकी मरज़ी [उदास होती है, फिर एकदमसे सतेज होती है] बट टेक इट कैप्टेन, बोमदि ला मैं जाकर रहूँगी । [कैप्टेन और विवेक दोनों हलके-से चौंककर उसकी ओर देखते हैं ।]

कैप्टेन : मिस रोज़, आपकी हठ तो आपके पापासे भी बढ़ी हुई लगती है । सोचिए तो, आपके पास परमिट नहीं है, इलाक़ा सारा मिलिट्रीने सील कर दिया है । मैं ऐसेमें क्या कर सकता हूँ ।

रोज़ : [उसी सतेज भावमें] आप समझते हैं मैं अपने पापाका बहाना करके किसी और कामसे बोमदि ला जा रही हूँ ? आपको मेरे उद्देश्यकी पवित्रतापर विश्वास नहीं ? आप मुझे···

[दो क्षणको विवेककी दृष्टि फिर सामनेकी पहाड़ियोंपर जा लगती है ।]

कैप्टेन : ओफ़्फ़ोह, मिस रोज़, मैं आपको एक नेक भारतीय महिला समझता हूँ, कुछ और नहीं····!

रोज़ : एक्सक्यूज़ मी, कैप्टेन; तब उसी नाते मेरी मदद भी करें !

[कैप्टेन उसकी ओर देखता है, एक पराजितकी-सी अर्थपूर्ण दृष्टि विवेककी ओर डालता है, फिर सिर नीचा किये सोचता हुआ—]

कैप्टेन : अच्छा देखता हूँ, आपके लिए परमिटका प्रबन्ध कर दूँगा । पर इनके साथ जानेकी बात [विवेककी ओर संकेत करता है] आप इनसे तय कर लें । क्यों मिस्टर विवेक ?

रोज़ : [विवेककी ओर अभिमुख होती है] प्लीज़ मिस्टर रॉय···

विवेक : [घने असमंजसकी भाव-मुद्राके साथ] बात यह है मिस रोज़···

रोज़ : [बीचमें ही] मैं सब समझती हूँ ! एक अनजानी महिलाके साथ होनेसे आपकी परेशानी बढ़ जायेगी···

विवेक : ऐसा नहीं, मैं कह रहा था कि हमारे पहुँचते-पहुँचते कहीं बोमदि लापर धावा हो गया तो बस्तीमें पहुँचना

सरल न होगा। आपको उस जोखिममें डालनेकी अपेक्षा मैं ही आपके पापाको खोज लानेका ज़िम्मा लेता हूँ।

रोज़ : थैंक यू मिस्टर रॉय! लेकिन काश पिताके लिए मेरी भावनाएँ भी आप समझ पाते! पापा विपत्तिमें हैं, उन्हें मेरी ज़रूरत है।

[विवेक और कैप्टेन दोनों सोचमें पड़ते हैं।]

मैं विश्वास दिलाती हूँ मिस्टर विवेक, मैं आपके लिए परेशानी न बनूँगी। आप फ़ुटहिल्सके आगे मुझे छोड़ दें, मैं फिर, देख लूँगी। मेरे लौटनेकी भी चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी। बोलिए, अब भी कोई आपत्ति है?

[रोज़के स्वरमें दृढ़ता और अनुनय दोनों हैं।]

विवेक : [मन-ही-मन सराहते हुए] जैसी आपकी इच्छा! [कैप्टेन-से] कर दीजिए भाई परमिटका प्रबन्ध, आइ शैल टेक इट एलॉङ्।

रोज़ : आह मिस्टर विवेक···हाउ गुड यू आर!

[कैप्टेन जानेको होता है कि दरवाज़ेके बाहर बग़लमें सट-कर इनकी बातें सुननेकी कोशिश करते हुए एक बूढ़ेपर उसकी नज़र पड़ती है। दबे पाँव कैप्टेन दरवाज़े तक बढ़ता है और लपककर उस बूढ़ेका कोट पकड़कर झटकेके साथ अन्दर खींच लेता है। बूढ़ा अधेड़ उमरका, कामेंगका कोई आदिवासी प्रतीत होता है। चेहरा झुर्रियोंसे भरा है। वह फटा-फटाया मोटा-सा कोट पहने है। पैर नंगे हैं। नीचे कोई तहमद-जैसी चीज़ लपेटे है। कैप्टेनके खींचनेसे वह ज़मीनपर गिर जाता है····और कुछ बड़बड़ाता है, जिसका कोई भी शब्द समझमें नहीं आता।]

कैप्टेन : [बूढ़ेको उठाकर झटकेसे खड़ा करते हुए] कौन हो तुम ? क्या करते थे वहाँ ? [विवेक और रोज़की ओर घूमकर] यह हम लोगोंकी बातें सुननेकी कोशिश कर रहा था···। [बूढ़ा हाथ हिला-हिलाकर कुछ बड़बड़ाता है जैसे सफ़ाई दे रहा हो, मगर उसकी बातें बिलकुल अस्पष्ट हैं। वह सिर्फ़ "ए-ए ओ-ओ-ओ" कहता है। बग़लसे करतारसिंह आता है —]

करतारसिंह : क्या बात हुज़ूर ? इस शीकूणे कुछ किया क्या ? क्यों रे शीकू ?

कैप्टेन : यह कौन है करतारसिंह ! उधर छिपकर बातें सुन रहा था। चीनी एजेण्ट है क्या ?

करतारसिंह : [हो-हो-हो करके हँसता है] शीकू····चीणी एजेण्ट ? [फिर उसी तरह हँसता है] वाह सरकार !····

कैप्टेन : [अकबकाते हुए] चुप रहो। क्यों हँस रहे हो इस तरह ?

करतारसिंह : [फिर भी हँसता रहता है] अरे सरकार यह तो हमारा चौकीदार है। एकदम गूँगा है, आहो जी !

कैप्टेन : तुम ठीक जानते हो यह गूँगा है ?

करतारसिंह : [फिर हँसता है] बिलकुल ठीक जानता हूँ सरकार। इसका तमाशा देखिएगा ? मैं आपको दिखाऊँ — [कैप्टेन, विवेक और रोज़ तीनोंका कुतूहल जग जाता है।]

कैप्टेन : कैसा तमाशा ?

करतारसिंह : अभी देखिए——

[करतारसिंह बग़लसे एक टमाटर उठाकर शीकूको दिखाता है] शीकू···शीकू ये ले ले !

[शीकू कैप्टेनके हाथसे अपना हाथ छुड़ा लेता है। फिर दाँत पीसता हुआ वह जंगली जानवरकी तरह उछलकर करतारसिंहके हाथसे टमाटर छीन लेता है और उसे धरती-पर पटककर पैरोंसे रौंदता हुआ कुछ बड़बड़ाता जाता है। सब आश्चर्य और विनोदके साथ देखते हैं। मिस रोजाके साथकी आदिवासी बच्ची नन्हीं-नन्हीं तालियाँ बजाती हँसने लगती है।]

कैप्टेन : [धीरे-धीरे गम्भीर होते हुए] क्या कर रहा है यह ? क्यों ?

करतारसिंह : साब, यह तो हम नहीं जानते, मगर इतणा देखते हैं कि लाल चीज़को देखते ही यह ग़ुस्सेसे फुफकारने लगता है, और जबतक उसे नष्ट नहीं कर देता, मरोड़-मसलकर; चैन नहीं लेता जी।

कैप्टेन : अजीब मेनिया है !

करतारसिंह : सरकार, ख़ाली होनेपर बैरे लोग तो यही तमाशा करते रहते हैं। टमाटर, रबड़के खिलौणे, बैलून, रूमाल, जो भी लाल रंगकी चीज़ मिल जाये, बस शीकूको दिखा-दिखाकर भागते हैं और यह जंगली दौड़-दौड़कर उन्हें पड़कता है····इसीमें कितनी बार तो इसका पैर टूटते-टूटते बचा जी, हाँ।

कैप्टन : [सोचता हुआ] पर तुम जानते हो यह बिलकुल सीधा आदमी है ? क्यों ?

करतारसिंह : हाँ सरकार बिलकुल गऊ है। कोई भी डाँट दे, यह कुछ नहीं कहता; बस दरवाज़ेके उस स्टूलपर चुपचाप बैठा जँभाई लेता रहता है। जा बे शीकू अपना काम कर !

[शीकू सबको देखता हुआ चुपचाप चला जाता है और दरवाज़ेपर रखे अपने स्टूलपर बैठकर हिमालयकी चोटियों-को उदास आँखों देखता रहता है ।]

कैप्टेन : जो भी हो मिस्टर विवेक, मिस रोज़, आप लोग इससे सावधान रहेंगे । ऐसे ऐब्नॉर्मल लोगोंका भरोसा नहीं होता । [किसी गहराईमें डूबते हुए जैसे अपनेसे ही कहता हो] या तो यह कोई ख़ून कर चुका है या जल्दी ही किसीका करेगा···

[शीकू गरदन मोड़कर कैप्टेनकी बात सुनता है । फिर पॉकेटसे बीड़ी निकालकर जलाता है और चुपचाप पीता रहता है ।]

विवेक : पिक्यूलियर कैरेक्टर !

[सामनेके दरवाज़ेसे एक पादरीका प्रवेश । पादरी लम्बे क़दका है । सफ़ेद चोगा उसे खूब फब रहा है । गलेसे झूलता क्रॉस उसके चौड़े-चकले सीनेपर सुन्दर लगता है । दाढ़ी घनी, लम्बी और सफ़ेद है । उसे अपनी ओर आते देख रोज़ा मुसकराती हुई आगे बढ़ती है ।]

रोज़ : [घुटने मोड़कर उसके पैरोंमें झुक जाती है] आह फ़ादर पिण्टो, आप यहाँ ?

पिण्टो : [रोज़के बालोंमें उँगलियाँ घुमाता] हाउ, यू नाटी गर्ल ?

रोज़ : थैंक्स फ़ादर, थैंक गॉड, मैं आज बोमदि ला जा रही हूँ । [रोज़ उठकर खड़ी होती है ।]

पिण्टी : अच्छा-अच्छा···सचमुच ?

रोज़ : येस फ़ादर :

विवेक : हम लोग तो इन्हें कबसे समझा रहे हैं साहब, लेकिन ये

मानती ही नहीं। शायद अब आपकी बात मान जायें।
[फ़ादर पिण्टो मुसकराते हैं]

पिण्टो : [रोज़से] आपका परिचय ? [विवेककी ओर हाथसे इशारा करता है।]
[रोज़ कुछ बोले कि उसके पूर्व ही—]

विवेक : मेरा नाम विवेक है; विवेककुमार रॉय।

पिण्टो : ओह आपसे मिलकर बड़ी ख़ुशी हुई मिस्टर रॉय।

कैप्टेन : आप एक न्यूज़-एजेन्सीके प्रतिनिधि हैं फ़ादर पिण्टो। बड़े सच्चे और बहादुर, अपने विश्वासोंपर जमे रहनेवाले।
[हँसता है।]

पिण्टो : अच्छा तो कैप्टेन साहब, आप भी हैं यहाँ ?

कैप्टेन : भला, आप क्यों हमें पहचानेंगे फ़ादर !

पिण्टो : अरे नहीं कैप्टेन, ऐसी भी क्या बात ? [विवेककी ओर देखते हुए] तो आप भी बोमदि ला जा रहे हैं क्या ?

विवेक : जा तो रहा हूँ फ़ादर।

पिण्टो : दैट्स ट्रू ऐडवेंचर ! यह है आत्माकी आग ! हमारे युवक तो मिस्टर विवेक जैसे बुझी राखके ढेर हो गये हैं। ऐडवेंचरके बिना कोई जाति कभी आगे बढ़ती है ?....तो रोज़ आपके साथ जा रही है ?

विवेक : जा रही हैं नहीं फ़ादर, जाना चाहती हैं; मगर आप आ गये हैं तो अब शायद आपके समझाये मान जायें।

पिण्टो : ओ नो, नो, मिस्टर विवेक। आप ओ'ब्राएन्सको नहीं जानते शायद। इनके तो घरानेकी विशेषता ही यह है कि जो एक बार ठान लें उसे करके रहेंगे—फिर चाहे जो हो !
[हँसता है]

रोज़ : तो हमें आप ऐसा ज़िद्दी समझते हैं फ़ादर ?

पिण्टो : समझता नहीं बेबी, आइ नो। योर ग्रैण्डफ़ादर—वह तो ज़िदके पिरेमिड ही थे। तुम्हारे पितासे उनसे अन्त तक न पटी। उनकी ही ज़िदपर डैनिएल सेनामें गये, कैप्टेन हुए। मगर सन् बयालीसके मूवमेण्टमें डैनिएलने निहत्थे भारतीयोंपर गोली चलानेका हुक्म देना मंज़ूर नहीं ही किया। फिर, कहाँ-कहाँ लिखा-पढ़ी चली और कितना-कितना डैनिएलको समझाया गया; पर डैनिएल अपनी बातपर अड़ा रहा और कैप्टेन-पदसे इस्तीफ़ा दे आया!

रोज़ : तो इसमें ज़िदकी क्या बात हुई फ़ादर? पापा निहत्थी जनतापर गोली चलाते? आत्माको कुचलनेके बजाय उन्होंने नौकरीको कुचल दिया—बस।

पिण्टो : [हँसता है] बात यहीं ख़त्म नहीं हुई न रोज़। गवर्नरने तुम्हारे ग्रैण्डफ़ादरको शिकायती पत्र लिखा कि ओ'ब्राएन परिवारसे राजभक्तिके ऐसे परिचयकी आशा न थी। तुम्हारे ग्रैण्डफ़ादर ग़ुस्सेसे पागल हो गये। उन्होंने उत्तर दिया कि आइरिश जातिका कोई बच्चा किसीकी आज़ादी कुचलनेका पाप नहीं कर सकता। उसी ग़ुस्सेमें वह हिन्दुस्तान ही छोड़कर चले गये। डैनिएलसे भी बहुत कहा, मगर इन्होंने अब यह ठानी कि हिन्दुस्तानमें ही रहेंगे और अपनी आँखों इसे आज़ाद होता देखेंगे। उस दिनसे कभी ये बोमदि लासे हटे नहीं। तब क्या आज इन्हें हटाया जा सकेगा जब चीनी फ़ौजोंका हमला होनेवाला है? नामुमकिन है बेबी, डैनिएलको वहाँसे हिला भी नहीं सकतीं तुम। मैं यदि ओ'ब्राएन्सकी प्रकृतिको ठीक-ठीक समझा हूँ तो टेक इट, डैनिएल लिविङ् विल नाट लीव बोमदि ला।

रोज़ : जानती हूँ फ़ादर, तभी तो इस आगमें कूदनेको तैयार हुई हूँ।

पिण्टो : [जैसे अपनेसे ही कह रहे हों] और तुम्हें समझाना तो और भी मुश्किल है। तुम्हारी रगोंमें तो आइरिश और गोरखा दोनों ख़ून एक साथ बह रहे हैं। तुम भला कब मानोगी मेरी बात !

रोज़ : फ़ादर पिण्टो मुझे आशीर्वाद दीजिए !

[फ़ादर पिण्टो भर-आँख रोज़की ओर देखते हैं; दृष्टिमें बड़ी सौम्य ममता घुली है।]

पिण्टो : मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है बेबी। मैं तुम्हारे पिताका मित्र हूँ : अपनी बेटीके लिए मैं सब कुछ करूँगा। [रोज़-की उँगली पकड़े खड़ी और उनकी ओर टुक-टुक देखती बच्चीके सिरपर हाथ फेरते हुए] यह तो वही रिफ़्यूजी लड़की है न ? तुम्हारी आया कह रही थी—

रोज़ : हाँ फ़ादर इसकी माँ एक मोनपा बौद्ध थी। चीनियोंने उसे मार डाला। तवाङ्से आये रिफ़्यूजियोंमें इसे एक दिन रोते हुए देखा। मैं इसे अपने साथ लेती आयी। [लड़कीके बालोंको सहलाती है] पूअर डार्लिङ् ! कैसी प्यारी-प्यारी है फ़ादर !

पिण्टो : हाँ सो तो है; पर अब इसे कहाँ रखोगी ?

रोज़ : सच फ़ादर, यह चिन्ता भी थी। अब आप आ गये हैं तो मैं जैसे छुटकारा पा गयी। मेरे बोमदि लासे लौटने तक आप इसे रख लेंगे फ़ादर ?

पिण्टो : मुझे रखनेमें क्या दिक़्क़त। इतने बच्चे हैं वहाँ, इसका भी मन रम जायेगा। मगर तुम रखना इसे किस तरह चाहती हो ?

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी रेग्मी स्मारक
पुस्तकालय
8946

रोज़ : नथिङ् पट्टिक्लर फ़ादर, सिर्फ़ इनसानकी ज़िन्दगी इसे देना चाहती हूँ। बस। कोई मज़हबी तालीम नहीं। उधर कभी इसका झुकाव हुआ तो किसी बुद्धिस्ट विहार-में ले जाकर दीक्षा दिला दूँगी। फिर ये जाने, इसका काम जाने।

पिण्टो : [मुसकराता है, उचटती आँखों एक बार विवेक और कैप्टेनकी तरफ़ देखता है, फिर धीमे स्वरमें] आइरिश रक्त किसी धर्मका हस्तक्षेप भी कहाँ स्वीकार करता है बेबी। तुम लोगोंके लिए तो हिन्दू धर्म ही संसारका सबसे सम्पूर्ण धर्म है, क्यों न ?

रोज़ : पापा तो क्रिश्चियन ही बने रहे फ़ादर। मेरे ऊपर माँका प्रभाव ज़रूर पड़ा और मैं समझती हूँ यह प्रभाव अन-मोल रहा।

पिण्टो : जाने दो बेबी—अब तो सारा 'आउटलुक' ही बदल चला। मैं भी मानने लगा हूँ कि धर्म दो ही हैं, और दोनों एक-दूसरेके बिलकुल विरोधी। एक धर्म है नीति, दूसरा अनीति। एक धर्म है स्वतन्त्रता, दूसरा ग़ुलामी। एक धर्म है इनसान, दूसरा शैतान। जो भी नीति-न्याय, स्वतन्त्रता और इनसानियतका विरोधी है वह हमारा शत्रु है। इसीलिए चीनी हमलेका भी हमें सही अर्थ समझना चाहिए बेबी। यह एक शैतानी सैलाब है जिससे बचनेके लिए पूरी आध्यात्मिक शक्ति, स्पिरिचुएल पॉवर, की ज़रूरत है।

कैप्टेन : क्यों फ़ादर पिण्टो, आपके मिशनने क्या निर्णय किया ?

पिण्टो : किस बारेमें कैप्टेन ?

कैप्टेन : तेजपुर छोड़नेके बारेमें ।

पिण्टो : कैप्टेन, मैं अपने बच्चोंके साथ हूँ। मेरे बच्चोंने कहा, हम इस सैलाबके डरसे अपना चर्च छोड़कर जाना कायरता समझते हैं—हम यहीं रहेंगे : मरकर भी, जीकर भी। मैंने उनकी राय मान ली है। हमारे मिशनके तेजपुरसे हटनेका कोई सवाल ही नहीं आता कैप्टेन।

कैप्टेन : लेकिन फ़ादर पिण्टो, साहस एक बात है सुरक्षा दूसरी। माना मौत या जोखिमसे मोरचा लेना साहस है, पर जान-बूझकर अपनेको शैतानके हाथों सौंपना क्या बुद्धिमानी कही जायेगी ?

पिण्टो : शैतान सदा इनसानको नीचा दिखानेके प्रयत्नमें रहा है कैप्टेन। उससे डरकर भागनेमें भी सुरक्षा कहाँ ? और भागते हम ही नहीं, जहाँ भागकर जाते हैं वहाँकी जनताको भी भागनेकी प्रेरणा देते हैं। इस तरह तो भयकी एक 'चेन' बन जायेगी कैप्टेन। इसलिए जोखिममें इनसानको सदा आत्माकी आवाज़ सुनकर डटे रहना चाहिए। [एक सेकण्ड ठहरकर] और यह भी हो सकता है कैप्टेन कि प्रभु अपने भक्तोंकी दृढ़ता परखना चाहते हों, उनके त्याग और सत्यकी जाँच करना चाहते हों। क्या हम यह सुनहला अवसर भागकर खो दें ?

[विवेक रोमांचित-सा हो जाता है।]

कैप्टेन : यू आर राइट फ़ादर। हिन्दुस्तानकी आत्माका प्रकाश कोई ढँक नहीं सकता।

पिण्टो : तो अब चलूँगा

रोज़ : [घुटने झुकाकर अभिवादन करती है] थैंक्स फ़ादर।

[फ़ादर पिण्टो उस मोनपा बच्चीको साथ ले चलनेके लिए बड़े दुलारसे बुलाता है ।]

पिण्टो : आओ बच्ची आओ ! [बच्ची ठुनकती-सी है] अरे ? मैं तुम्हें बहुत सारे खिलौने दूँगा, मेरी अच्छी-अच्छी बच्ची ? आओ !

रोज़ : हाँ बेबी जा, फ़ादर बाबाके साथ जा ! मैं भी तेरे लिए बहुत-से खिलौने लाऊँगी, मेरी सोने-सी गुड्डी !

[रोज़का स्वर भीग आता है। बच्चीको उठाकर वह फ़ादरकी गोदमें दे देती है। फ़ादर पिण्टो उसे लिये हुए दरवाज़ेकी ओर बढ़ते हैं ।]

पिण्टो : विश यू गुड लक मिस्टर विवेक! गुड आफ़्टरनून कैप्टेन !

विवेक : थैंक यू फ़ादर, थैंक यू !

कैप्टेन : गुड आफ़्टरनून फ़ादर ।

[रोज़ बच्चीकी तरफ़ हाथ हिलाकर उसे बिदा करती है, फ़ादरके कन्धेपर गरदन टिकाये बच्ची रुँआसी आँखों रोज़-की ओर टुकुर-टुकुर ताकती है]

विवेक : [बच्चीको देखते हुए] यह तो रोना-ठुनकना भी भूल गयी । संकट जाने क्या-क्या सिखा देता है ! [रोज़की तरफ़ देखते हुए] आप तैयार हैं मिस रोज़; कुछ लेना तो नहीं ?

रोज़ : बस एक शॉल ले लूँ मिस्टर विवेक, अभी पन्द्रह मिनिट-में आयी । देखिए छोड़कर चले मत जाइएगा । [एक अजीब उदासीसे मुसकराती है]

विवेक : अरे नहीं-नहीं [हँसता है] ऐसा मत सोचिए मिस रोज़ । शॉल ले आइए ।

[रोज जाती है।]

विवेक : [कैप्टेनसे] क्यों साहब, मैंने जब परमिट माँगा तो आपने अपने अधिकारके बाहरकी बात कहकर नाहीं कर दी और अब इस लड़कीके लिए परमिटका इन्तज़ाम कर रहे हैं ? [हँसता है।]

कैप्टेन : हम न जाने किस उद्देश्यसे क्या करते हैं।

विवेक : मतलब ? आपको मिस रोज़पर सन्देह है ?

कैप्टेन : हमारा काम ही कुछ ऐसा है भाई कि इसमें विश्वासको सन्देह और सन्देहको विश्वास मानकर चलना पड़ता है।

विवेक : यानी ?

कैप्टेन : यानी [अटकते हुए] बस देखते चलिए। [खड़ा हो जाता है] अच्छा तो मैं भी चलूँ। आध घण्टेके अन्दर आपकी जीप सामने सड़कपर होगी। [अपनी टोपी उठाकर कैप्टेन चला जाता है। शर्माका प्रवेश]

गोपाल : तो आप बोमदि ला जा रहे हैं, सरकार ?

विवेक : हाँ शर्मा, तुम्हारे पहाड़ोंको ज़रा पाससे भी देख लूँ कि ये कितने कड़े हैं ? [हँसता है] एक कप चाय लाना।

गोपाल : अभी लाया बाबू। ये पहाड़ कड़े और पत्थरके ही नहीं सरकार, इनकी छातीमें दूधके सोते भी बहते हैं। ये सामनेवालेके भावको ख़ूब पहचानते हैं। जिसने जैसे देखा, वैसे ही दिखे। [चाय लेने चला जाता है।]

[विवेक खिड़कीसे सामनेकी पहाड़ियोंको देखता है जो डूबते सूरजकी उजासमें लाल होने लगी हैं। शर्मा चाय लेकर धीरे-धीरे गुनगुनाते हुए आता है।]

विवेक : क्या गुनगुना रहे हो शर्मा ? ज़रा ज़ोरसे गाओ।

गोपाल : [चाय रखता हुआ] इन्हीं पहाड़ोंका गीत है बाबू; सुनिएगा।

विवेक : पहाड़ोंका गीत ?

गोपाल : हाँ सरकार।

विवेक : [चायका सिप लेता है] ज़रा सुनाओ।

[शर्मा एक मेज़के नीचेसे अपना बैंजो निकालता है और एक तरफ़ कुरसीपर बैठकर खिड़कीसे सामनेकी पहाड़ियोंको देखते हुए भीगी कांपती हुई आवाज़में गाता है।]

य' पहाड़ हमारे आखों के तारे
इनको कभी ना भूल सकेंगे।
ये बहते नाले जंगल काले
शृंग छबीले घूँघट वाले
हमको हमेशा याद करेंगे।
इनको कभी ना भूल सकेंगे॥
य' ऊँचे कगारे साथी हमारे
य' हँसते झरने हमको प्यारे
कैसे इन्हें बेगाना कहेंगे।
इनको कभी ना भूल सकेंगे॥
जब हम हँसते तब ये हँसते
जब हम रोते ये चुप करते
इनके लिए सौ जन्म जियेंगे।
इनके लिए सौ जन्म मरेंगे॥
इनको कभी ना भूल सकेंगे॥

[गाना समाप्त होता है। विवेक न जाने क्या सोचता कहाँ खोया रहता है।]

[परदा]

अंक दो : दृश्य दो

[रातका समय। स्टेजपर फेंकी हुई लाइटके उजालेमें विवेक और रोज़ प्रवेश करते हैं। दोनों काफ़ी थके-थके-से हैं। विवेककी देहपर चेस्टर है, रोज़ शॉल ओढ़े है। बारीक धुनी रूईके रेशेकी तरह, कुहरे और बर्फ़के कण स्टेजपर लगातार गिरते हैं। सामने एक बहुत बड़ा पेड़ है। जिसके नीचे वे दोनों खड़े हो जाते हैं]

विवेक : अब मिस रोज़? जीप तो आगे जा नहीं सकती। यहाँ-तक भी न आती, मगर जैसी हलचल यहाँ मची है उसमें किसीको इधर ध्यान देनेकी सूझी ही नहीं।

रोज़ : [एक नज़र आगे-पीछे देखते हुए] हाँ, फ़ुटहिल्ससे तो हम काफ़ी आगे बढ़ आये हैं, बोमदिला सिर्फ़ कुछ ही दूर तो रह गया होगा?

विवेक : सो तो ठीक है, मगर आप यह भी तो देख रही होंगी कि ज्यों-ज्यों हम बस्तीके पास पहुँच रहे हैं, सैनिक व्यवस्थाकी कड़ाई बढ़ती जा रही है।

रोज़ : [सोचमें पड़कर गम्भीर हो जाती है] तो फिर अब क्या करें?

विवेक : छिपकर घुस पाना मुश्किल भी है और उचित भी नहीं : पता नहीं कब कोई सैनिक सन्देहमें गोली दाग दे।

रोज़ : [उसी प्रकार] मिस्टर विवेक! [एक क्षण रुककर] आप

जानते हैं इस वक़्त ज़रा-सी देर भी कैसी ख़तरनाक हो सकती है। पापा न जाने कहाँ होंगे। ख़ुद वह निकल-कर आना न चाहेंगे, मैं पास होती तो उन्हें कह-सुनकर तैयार कर पाती। पता नहीं दुश्मन किस वक़्त टूट पड़े। फिर तो और भी आफ़त हो जायेगी। मिस्टर विवेक...

विवेक : मैं आपकी स्थिति समझ रहा हूँ मिस रोज़! मगर अपनी आँखोंके सामने ही आपको ऐसी जोखिममें कैसे जाने दूँ? सोचिए तो ज़रा!

रोज़ : सोचना-वोचना सब बेकार है अब मिस्टर विवेक! अब सोचनेको रहा ही क्या? यह क्षण रहस्यकी एक पतली रेखामें बँधा है। इस पार रोज़के प्राणोंका ख़तरा है तो उस पार पिताके प्राणोंका। इस पार मेरी ज़िन्दगीका सूनापन ललकार रहा है, तो उस पार शत्रुकी बर्बरता अट्टहास कर रही है। मुझे उस पार जाना ही होगा विवेक!

विवेक : किन्तु यह तो बुद्धिमानी न होगी मिस रोज़, पिता शत्रुके हाथोंमें पड़ जायेंगे, इससे पुत्रीकी आत्माको तो ठेस लगेगी, किन्तु देशकी एक कन्याको शत्रुके हाथोंमें पड़ जानेपर तो सारे राष्ट्रकी आत्मा काँप उठेगी। ना ना, आप यह क़दम रोक लीजिए। ढाई तीन घण्टोंकी ही तो बात है। सबेरा होनेको है: फिर तो उसके उजालेमें अब समूचे देशकी आत्माकी ही अग्निपरीक्षा है। अब या तो लपटोंमें उभरते हुए राष्ट्रका नया दीप्तिमय व्यक्तित्व ही देखेंगे, या तो सर्वस्व होमकर राखका ढेर बना देनेवाली विध्वंस लीलामें अपनी आज़ादीको

अन्तिम साँसें तोड़ते देख लेंगे। जो भी बदा होगा, हम उसे पूरे साहससे देखेंगे और सहेंगे !

रोज़ : मिस्टर विवेक, क़स्बेके और लोग तो जैसे-तैसे इस ख़ूँख़ार ड्रेगनके पंजेसे बच भागनेकी कोशिश भी करेंगे, किन्तु मेरे पिता····[गला रुँध जाता है।]

विवेक : नहीं, नहीं मिस रोज़। ऐसा नहीं करते [उसकी पीठपर थपथपाता है] आप तो कितनी समझदार हैं। [विवेक वहीं उसी पेड़के नीचे तनेमें सटकर बैठ जाता है और सिगरेट निकालकर जलाता है] सवेरा होने तक यहीं ठहरना उचित है। मिस रोज़ आइए, आराम कर लीजिए। [सहसा कुछ देखकर चौंकता है।] अरे यह कौन है ?

[सामने कोई आदमी कम्बलमें गुड़मुड़ाया हुआ पड़ा है। वह और कोई नहीं गूँगा शीकू है, जो एक क्षण उनकी ओर अजीब दृष्टिसे देखता रहता है। फिर एकदमसे उठकर भागता है····विवेक अपनी जगहसे उठकर उधरकी ओर लपकता है।]

विवेक : शीकू ? [आश्चर्य और कुशंकाओंसे उसकी मुख-मुद्रा अचानक गम्भीर हो जाती है।]

रोज़ : कौन था विवेक ? यह तो तेजपुरके होटलका वही गूँगा चौकीदार लगता था।

विवेक : चौकीदार नहीं, चोर या चोरोंका साथी। मुझे तो यह चीनी एजेण्ट मालूम होता है। इसकी सभी कारगुज़ारी जासूसों-जैसी ही मालूम होती है। होटलका मालिक करतारसिंह कहता था कि यह गूँगा है, बेचारा और

बेसहारा है—मगर मुझे तो और ही लगता है। इसका होटलके दरवाज़ेसे छिपकर हमारी बातें सुनना, डाक-ख़ानेके सामने रुककर कुछ जाननेका प्रयत्न करना, हमें देखकर दीवारकी आड़में छिप जाना और अब इस तरह पीछा करना ? हो न हो कुछ दालमें काला है आप इसे पहचानतीं तो नहीं ?

रोज़ : [भड़ककर] क्या मतलब ? आप समझते हैं मैं उससे परिचित हूँ ? मेरा उससे कोई सम्बन्ध है ? मैं भी चीनी एजेण्ट हूँ ?

विवेक : क्षमा करेंगी मिस रोज़ मेरा यह मतलब बिलकुल नहीं था। मैं यह जानना चाहता था कि कहीं यह आपसे या आपके पितासे तो परिचित नहीं। कहीं आपके अकेले बोमदि ला जानेकी सुनकर कोई क्षति पहुँचानेके लिए तो पीछा नहीं कर रहा ? मेरी बातोंका आपने औरका और अर्थ लगा लिया और नाराज़ हो गयीं। संकटके समय सावधान रहना होता है मिस····?

रोज़ : सॉरी मिस्टर विवेक, फॉरगिव मी। मुझसे ग़लती हुई। मैं असलमें अपने पिताकी चिन्तामें ऐसी एब्नार्मल हो गयी हूँ कि ठीकसे कुछ सोच-समझ भी नहीं पाती। मैं तुम्हारा यह उपकार कभी न भूल पाऊँगी मित्र !

[रोजका स्वर गीला हो जाता है। विवेकका हाथ अपने हाथमें लेकर धीरेसे दबाती है। फिर सहज ही डबडबायी आँखोंसे बोमदि लाकी ओर देखने लगती है।]

विवेक : फिर वही आँसू ! तुम अपनेको पहचानो रोज़, तुम्हें यह

शोभा नहीं देता। तुम चाहो तो मैं इसी क्षण उधर चल सकता हूँ। [विवेक पुनः उस तनेसे सटकर बैठ जाता है।]

रोज़ : नहीं-नहीं, जान-बूझकर तुम्हें किसी जोखिममें नहीं डालूँगी मैं। हाँ, उस शीकूके बारेमें तुम क्या कह रहे थे? [रोज़ विवेकके पास ही बैठ जाती है।]

विवेक : शीकू? हाँ, मुझे अचम्भा इस बातका है रोज़ कि हम यहाँ जीपसे अभी-अभी पहुँचे और यह बूढ़ा शीकू पैदल चलकर हमसे पहले ही पहुँच गया। आख़िर कैसे? क्या रहस्य है इसमें?

रोज़ : यह इस पहाड़ी इलाक़ेका रहस्य है विवेक! यहाँके रास्ते वे ही नहीं हैं, जो हम जानते हैं। बहुत-से गुप्त रास्ते भी हैं जो यहाँके आदिवासियोंको ही मालूम हैं, और जो थोड़े मुश्किल तो हैं, मगर काफ़ी छोटे हैं। अब देखो न, तवाङ्से बोमदि लाका मुख्य मार्ग से-लासे होकर है। चीनी सैनिकोंको रोकनेके लिए इस दर्रेपर हमारा विशेष मोरचा था, ख़ूब मज़बूत और दृढ़। हमारे सैनिक अधिकारियोंको विश्वास था कि अपनी सारी शक्ति, संख्या और तदबीर लगाकर भी इस मोरचेको तोड़ सकना चीनियोंके लिए लोहेके चने चबाना हो जायेगा। मगर आज रेडियोसे ख़बर मिली कि चीनी किसी गुप्त मार्गसे से-लाको एक ओर काटते हुए आगे बढ़ आये।

विवेक : बड़ी समस्या है। [गम्भीर हो जाता है] लोग कहते थे कि यहाँ तवाङ्से से-ला, बोमदि ला रोडके अलावा कोई दूसरा रास्ता है ही नहीं। मगर अब लगता है कि ऐसी बात थी नहीं। कोई-न-कोई गुप्त मार्ग ज़रूर रहा।

रोज़ : वही तो। लेकिन उन्हें मालूम कैसे हुआ कि से-लाको 'आउट फ्लैंक्ड' किया जा सकता है। ज़रूर हमारे बीच ऐसे इनसान मौजूद हैं जो अपने स्वार्थके लिए देशको बेच सकते हैं, अपने सुखके लिए पूरे राष्ट्रको मौतके मुखमें झोंक सकते हैं, कुछ ठीकरोंके लोभसे देशकी अनमोल आज़ादीका सौदा कर सकते हैं।

विवेक : कितने शर्मकी बात है सच! [अनायास तनेके सहारे उठँग जाता है और दोनों हाथ सहारेके लिए सिरके पीछे जा रहते हैं। फिर सामने और इधर-उधर एक उचटती नज़र देखते हुए अपने आप] कैसा घोर सन्नाटा है। सामनेकी पहाड़ियाँ, जंगल, खेत, टीले, मकान सभी कुहरेकी लिहाफ़में सिमटे गुमसुम पड़े हैं। जैसे सभी साँस रोके किसी भयंकर तूफ़ानकी प्रतीक्षा कर रहे हों।

रोज़ : तुम्हें डर लग रहा है क्या? [हलकेसे हँसती है।]

विवेक : डर? हाँ, तेजपुरसे चले तो ज़रूर लगा; लेकिन अब। ना अब तो बिलकुल ही नहीं लगता। मनुष्य भी सचमुच कितना शक्तिशाली पंछी है रोज़, कि किसी बड़ेसे बड़े तूफ़ानमें इसे डाल दो, दो-एक क्षण लड़खड़ायेगा, पंख तोलेगा, घायल डैने फड़फड़ायेगा, और फिर तुरन्त जैसे हवाकी गतिमें ही गति मिलाकर एक अद्भुत ताल-लयके साथ उड़ चलेगा। बेबस पत्तेकी तरह बवण्डरमें टूक-टूक हो जाना उसका स्वभाव नहीं।

रोज़ : हाँ, इसी संकटको देखो न! लोग कहते थे कि हमारे देशमें एकता नहीं है, किन्तु समय पड़नेपर कैसी अद्भुत घटना घटी है यह भी!

विवेक : सच रोज़ मुझे तो कभी आवेशमें लगता है कि यदि इस पूरे देशकी जनताको एक जगह पा जाता तो उसके चरणों-में शीश नवा देता; कहता कि देवता तुम्हारी शक्ति, तुम्हारी हिम्मत धन्य है, तुम्हारा साहस बेजोड़ है। तुम्हारे चरणोंपर लाख-लाख कवि, पत्रकार, बुद्धिजीवी क़ुर्बान हैं। [जँभाई आती है, विवेक मुँहके पास चुटकी बजाता है।]

रोज़ : किसने सिखाया इन्हें कि संकट क्या होता है, किसने कहा कि देशके नामपर क़ुर्बानी कैसे करनी होती है, किसने पढ़ाया इन्हें त्याग और बलिदानके ये अनोखे पाठ विवेक !

विवेक : [ऊँघते हुए] हूँ, कुछ कह रही हो ?

रोज़ : क्या बात है ?

विवेक : पता नहीं, बड़ी थकान मालूम होती है। [एक क्षण सन्नाटा]।

रोज़ : सो रहे हो ? अच्छा····। [मौन। कुछ देर बाद] सो गये तुम ? विवेक !

[रोज़ दो क्षण विवेकके मुँहकी ओर देखती हुई कुछ सोचती है, फिर धीरेसे शाल ठीक करती हुई] ऐसे लोगों-से सचमुच मुझे बड़ी ईर्ष्या होती है जो संकटके समय भी बुद्धिका सन्तुलन नहीं खोते और एक क्षणके लिए ही सही सभी चिन्ताओंसे मुक्त होकर नींदकी गोदमें सो जाते हैं। वाइ, प्रेशस फ्रेण्ड ! तुम्हारी सहानुभूति कभी भूल न पाऊँगी। मैं अपने मनको समझाकर हार गयी हूँ। तुम्हारा कहना ठीक भी होगा। पर मैं जल्दीसे जल्दी पापाके पास पहुँचना ही चाहती हूँ। मेरे बालोंकी एक-

एक लट जैसे लहर-लहरकर कह रही है कि देर करके कहीं तू उन ममतालु हाथोंका स्पर्श सदाके लिए खो न दे। [विवेककी ओर फिर देखती हुई धीरेसे] तुम्हारे साहसमें कितनी प्रेरणा-शक्ति है मित्र! विश्वास रखो कि शत्रुके हाथों अस्मत खोकर रोज़ कभी भी देशको कलंकित न करेगी [उठ खड़ी होती है] गुड बाइ।

[धीरे-धीरे पैर रखती हुई रोज़ नेपथ्यकी ओर चली जाती है। सन्नाटा जैसे बढ़ता है। अँधेरा और भी गाढ़ा हो जाता है तभी एक चक्राकार आलोक विवेकके मुँहपर पड़ता है। उस काँपते हुए उजालेमें गोल-गोल लहरें-सी उठती हैं। रोशनीमें विवेकके माथेपर घनी सिकुड़नें स्पष्ट उभरी हुई दिखाई पड़ती हैं। जैसे वह कोई बहुत अचरज-भरा स्वप्न देख रहा है। घने अँधेरेमें एक ओरसे एक ठिगना व्यक्ति प्रवेश करता है। उसका सारा शरीर काले लबादेमें ढँका हुआ है। सिर छोटा और गंजा है। मूँछें लम्बी-लम्बी, पतली रस्सीकी तरह दोनों ओर झूलती हुई। एक हाथमें वह टिनके कुछ डिब्बे लिये है। दूसरेमें हड्डीका एक टुकड़ा। स्टेजपर वह इस तरह चलता आता है जैसे हवामें उड़ रहा हो। फिर वहाँ बीचो-बीच खड़ा हो जाता है। इधर-उधर अगल-बग़ल झाँकता है। एक बार सामने देखनेके बाद टिनके बड़े डिब्बेमें-से एक-एक करके तीन डिब्बे निकालता है जो एक-दूसरेसे क्रमशः छोटे छोते हैं। वह नेपथ्यकी ओर झाँकता है। दूसरी तरफ़से उसी आकार-प्रकारका, मगर उससे छोटा और पतला एक व्यक्ति निकलकर आता है जो जादूगरका शिष्य है।]

शिष्य : मास्टर! मास्टर।

जादूगर : [हलकेसे चौंकता है] अयँ चुन चिह चेह ! मेरे बेटे, तू आ गया ? बहुत अच्छे, बहुत ख़ूब !

शिष्य : मास्टर [हाथ जोड़कर घुटनेके बलपर बैठ जाता है] आपने कहा था कि आज आप ऐसा तमाशा दिखायेंगे जैसा किसीने कभी नहीं किया, किसीने कभी नहीं देखा। [हर क्रियापदपर ज़ोर दे-देकर बोलता है]

जादूगर : हो-हो-हो-हो, हा-हा-हा, मेरे प्यारे चुन चिह चेह, तुझे सचमुच ऐसा तमाशा दिखाऊँगा जिसे आजतक किसीने कभी नहीं किया, किसीने कभी नहीं देखा ।

शिष्य : [हँसता है] ज़रूर मास्टर, आप सारे जहाँके जादूगरोंके सिरताज, हमारे महान् देशके जादू सम्राट् ! अब अपने इस शागिर्दपर मेहबानी करें और अपना वह तमाशा दिखायें ।

जादूगर : तो देख बेटे ! ग़ौरसे देख ।

[जादूगर बड़े डिब्बेमें-से साँपके आकारका लेकिन छिपकलीसे मिलता-जुलता एक जानवर पूँछ पकड़कर बाहर खींचता है। और मुँहसे चुच् चुच् चुच्की आवाज करता है ।]

शिष्य : ओह, मास्टर ! यह तो सोनेका ड्रैगॅन है । मैं क्या इसे जानता नहीं ? ड्रैगॅन-ड्रैगॅन, ड्रैगॅन महान् । नागराजका प्रताप कौन नहीं जानता ? मुझे वह कहानी कभी नहीं भूलती मास्टर ! क्या नाम है उसका ? तांगके सम्राट्के समयका लेखक है वह [त्रिपुटीपर उँगली दबाकर सोचता है] हो, याद आया ली चाओ वी । उसीने लिखी है वह ड्रैगॅन राजकी कन्या कहानी । मास्टर एक बार मुझे

भी ड्रगॅन लोककी सैर कराइए न ! जहाँ नरम-नरम हवाएँ बहती हैं, दूधकी नदियाँ उफनती हैं, जहाँ सुनहरे बैलून, और फूलोंके हार ढके केलेके खम्भोंसे दपदप करते रत्नोंके गुच्छे झूलते हैं; जहाँ ख़रबूजेके बीजोंकी तरह चमकती आँखोंवाली कोमल-कोमल सुन्दरी ड्रगॅन-कन्याएँ, मचलती हुई गाती हैं :

ज़िन्दगी और मौत दोनों भाग्य से बँधे हैं जहाँ
मेरी शाहज़ादी को निकम्मा वर मिला वहाँ
हाय री नदी चिंग तेरे चिकने लाल किनारे
वहाँ बर्फ़ की हवाएँ औ' कुहरे की फुहारें
हा हा हा [हँसता है ।]

जादूगर : चुप करो मेरे प्यारे शागिर्द चुन चिह चेह, चुप करो। तुम ड्रगॅन कन्याओंके मोहमें न फँसो, जानकर उस मौतकी नदी चिंगमें न धँसो। ड्रैगॅनकी ताक़त तुम नहीं जानते। इसके प्रतापसे सब देवता भी काँपते हैं। तो आज तुम्हें स्वर्गकी तीन बुज़ुर्ग आत्माओंसे मिलाता हूँ और इस डैगॅनकी ताक़तकी झलक दिखाता हूँ।

[डैगॅनको झटकता है। स्टेजपर धुआँ छा जाता है। इस धुएँके भीतरसे बड़ा-सा सफ़ेद चोगा पहने लम्बी दाढ़ीवाला एक आदमी हाथमें चीनी पंखा लिये और उससे मुँहपर धीरे-धीरे हवा करते हुए स्टेजपर आता है। छाया-कृतिपर हलके रंगकी रोशनी पड़ती होती है।]

जादूगर : आप ? कौन हैं आप ?

प्रेतात्मा : मैं कॅन्फ़्यूशियसकी आत्मा हूँ। कॅन्फ़्यूशियसकी।

शिष्य : [घुटने झुकाकर बैठ जाता है] ओह कॅन्फ़्यूशियस महान्। आपको चेन चिंगका पुत्र चुन चिह चेह प्रणाम करता है।

कॅन्फ़्यूशियस : मेरी तीन शिक्षाएँ तुम्हारा कल्याण करें।

शिष्य : कौन-सी तीन शिक्षाएँ महात्मन्!

कॅन्फ़्यूशियस : [आश्चर्यसे] ऐं क्या एक चीनी युवकको मेरी तीन शिक्षाओंका भी ज्ञान नहीं रहा?

शिष्य : क्षमा करें महात्मन्। एक बार अपने मुखसे सुना दें उन्हें।

कॅन्फ़्यूशियस : मेरी तीन शिक्षाएँ ये थीं पुत्र कि प्रत्येक दिन तीन बार सोचो कि क्या तुम दूसरोंके साथ व्यवहारमें सदा सत्यका पालन करते हो? क्या तुम अपने मित्रोंके साथ हमेशा ईमानदारीका आचरण करते हो? क्या तुम जो दूसरोंके लिए उपदेश रूपमें कहते हो उसपर ख़ुद अमल करते हो?

जादूगर : हा, हा, हा, हा! मेरे प्यारे चुन चिह चेह, सुना तुमने यह खूसट बूढ़ा क्या कह रहा है? ईमानदारी, सत्य आचरण···हा हा हा हा···क्या बकवास है! अरे भाई यह बीसवीं सदी है। इसमें बाबा आदमके ज़मानेकी बातें नहीं चलेंगी। ईमानदारी मूर्खोंका ढकोसला है। सत्य कायरोंका प्रलाप है और आचरण? यह एक दुधारी तलवार है। मेरे भाई, यह शत्रुपर भी वार करती है और मित्रपर भी। कृपा करके इन बे-अर्थ शब्दोंका जाप बन्द करें।

कॅन्फ़्यूशियस : ओह ईश्वर! अपने युगमें एक बार जू कुंगसे मैंने कहा था कि मुझे कोई नहीं समझता। तब मैंने सोचा था कि यह मज़ाक़ किया है।

शिष्य : क्या कहा था आपने महात्मन् ।

कॅन्फ़्यूशियस : मैंने कहा था कि मुझे कोई नहीं समझता क्योंकि मैंने कभी ईश्वरके अस्तित्वमें अविश्वास नहीं किया, कभी मनुष्योंमें दोष नहीं खोजे, कभी नीचसे नीच आदमीसे भी सत्य सुनकर अनसुना नहीं किया, कभी इनसानियतकी ऊँचाइयोंको पानेमें झिझका नहीं – और ऐसे 'मैं' को यहाँ कौन जान पायेगा भला ? कौन जान पायेगा ? शायद स्वर्गस्थ ईश्वर, सिर्फ़ ईश्वर [उदास आँखों आसमानकी ओर देखता है ।]

जादूगर : ईश्वर ! स्वर्ग !! हा, हा, हा, तुमको हम ख़ूब समझते हैं कॅन्फ़्यूशियस ! तुम चीनके सबसे बड़े प्रतिक्रियावादी थे । तुम्हींने हमारे चीनको निकम्मा और कायर बनाया । तुम्हींने हमारी जनताको भुलावेमें डाला । तुम्हींने ईश्वर और सदाचारका नाम ले-लेकर दुःखी मनुष्योंको क्रान्ति करनेसे रोका । तुम्हारे उपदेशोंने हमारी लड़ाईमें पीछेसे वार किया । छिः छिः, तुम अपनेको महात्मा कहते हो ? सदाचारी कहते हो ? तुम परले दर्जेके पाखण्डी थे, बोर्जुवा, बेवक़ूफ़ोंके सरदार !

कॅन्फ़्यूशियस : तुम्हारी आत्मामें शैतानका वास हो गया है मेरे बच्चे ! बड़े-बूढ़ोंसे तुम्हें ऐसे नहीं बोलना चाहिए; तुम्हें सदाचारी और नेकनीयत इनसान बनना चाहिए ।

जादूगर : ए पाखण्डी पागल ! हमारे इस ड्रैगॅनकी शक्तिका तुम्हें ज्ञान नहीं है क्या ? यह पैंसठ करोड़ मुखोंसे अग्नि उगलता है, एक सौ तीस करोड़ पैरोंसे चलता है । हेंह, तुम क्या जानो ? तुम कैसे समझो कि जन-शक्ति क्या होती है ?

कॅन्फ़्यूशियस : तुम्हारी यह जनशक्ति झूठा सपना है बच्चे ! जनशक्ति अहंकारीका साथ कभी नहीं देती। याद है मैंने जुलूसे कहा था कि जनताका सम्मान उसी शासकको मिलता है जो सत्यके रास्ते चलता है, और जनताके दुःख-दर्दको स्वयं झेलता है।

जादूगर : बस बस, बन्द कीजिए यह बकवास ! आपकी नीति और धर्मके ढकोसले हमें नहीं सुनना, जाइए उधर कोनेमें खड़े हो जाइए।

कॅन्फ़्यूशियस : अच्छा मेरे बच्चे मैं कोनेमें खड़ा हो जाता हूँ। मगर फिर कहता हूँ कि तुम्हारी राह बर्बर हूणोंकी राह है। इसपर आगे-आगे तुम्हारी क्रूरता और हिंसाकी सजाई आग और ख़ूनके शोले और सैलाब होंगे तो पीछेसे तुम्हारे ध्वंस और विनाशका गरजता-उफनता समुन्दर भी साथ-साथ चलेगा। मेरे बच्चो, चंगेज़ और हलाकूकी परम्परामें अपनेको मत गिनाओ। चीनकी महान् सभ्यता, संस्कृति और कलाको कलंकित मत करो। अपने देश और जातिके सदियोंके कमाये ज्ञानपर मत थूको। तुम उस प्राचीन वैभवपर मुँह उठाकर थूकोगे तो तुम्हारा चेहरा भी साफ़ नहीं बचेगा [सिसकता है।]

जादूगर : [घृणासे] बूढ़े, सिड़ी, ये अपने टुश्के रोक और चुपचाप हमारे ड्रैगॅनकी करामात देखता चल। [जादूगर ड्रैगॅन-को फिर झटकारता है, इस बार ड्रैगॅनके मुँहसे हिश्शकी आवाज़ होती है जैसे किसीने तेज़ धारकी तलवारको पीतल-के बरतनपर ज़ोरसे खींच दिया हो। तभी मंचपर एक विराट् आदमक़द प्रकाश-पुंज उभरता है। साथ ही पीछेसे समवेत कण्ठसे यह गान उठता है :]

उक्खित्त खग्गमतिहत्थ सुदारुणन्तं
धावन्ति योजनपथं गुलिमालवन्तं
इद्धी मिसंखत मनो जितवा मुनिन्दो
तं तेजसा भवतु ते जयमंगलानि

जादूगर : [विस्मित-जैसा होता] आप कौन ? कौन आप? सामने क्यों नहीं आते ?

प्रकाश-छाया : मैं तथागत बुद्ध हूँ। तुम मुझे अपनी इन आँखोंसे नहीं देख सकते। मुझे देखनेके लिए सत्यकी आँख चाहिए, करुणासे भरा हृदय चाहिए। मैं अंगुलिमाल-जैसे राक्षसोंको दिखाई पड़ा था क्योंकि वे अत्याचारी भले ही थे, पर तुम्हारी तरह धोखा और छल नहीं करते थे।

जादूगर : [तैशके साथ] तो मैं धोखेबाज़ हूँ ? मैंने छल किया है ?

प्रकाश-छाया : सत्य यही है, आवुस। इतिहास यही पुकारेगा।

जादूगर : [ठहाका लगाता है] किसने तुम्हें 'बुद्ध' नाम दे दिया! [ज़रा तनते हुए] क्यों, तुम्हें मेरे ड्रैगॅनकी शक्तिसे भय नहीं होता ?

प्रकाश-छाया : [उसी शान्त और स्निग्ध स्वरमें] तथागतको भय नहीं होता। तथागतकी करुणा पाँव-तलेकी चींटीके लिए भी है किन्तु शाक्यसिंहने मदमत्त मारका अपार सैन्य छार-खार किया था।

जादूगर : देख लूँगा [ऐंठता हुआ]—अभी तो आप भी उस जाहिल बूढ़ेके पास खड़े हों [जहाँ कॅन्फ़्यूशियसकी आत्मा खड़ी थी उधरको इशारा कर देता है] जाइए···हँह, सब एक जैसे हैं ! मैं अभी सबको अपने ड्रैगॅनकी करामात दिखाता हूँ—

[जादूगर एक बार ड्रैगॅनको फिर झटकारता है। इस बार लाल रंगके धुएँसे जो छाया उभरती है वह बिलकुल लाल है : लाल लबादा, सुनहरी दाढ़ी। यह मार्क्सकी आत्मा है।]

मार्क्स : कहो ?

जादूगर : [कुछ-कुछ पहचानते हुए] आप कौन श्रीमान् ?

मार्क्स : [हलके आश्चर्यसे] हूँ ? मैं मार्क्स : कार्ल मार्क्स।

जादूगर : हाँ-हाँ [खिलता-सा है] आइए, आइए, मैं तो मन-ही-मन आपको ही गुहार रहा था। इन मूर्खोंको [कॅन्फ़्यूशियस और तथागतकी ओर संकेत करता है] आप ही कुछ सिखा सकते हैं।

मार्क्स : बड़े अशिष्ट जान पड़ते हो ?

जादूगर : [आश्चर्यचकित होते] क- कैसे ?

मार्क्स : ऐसे कि तुमने समझ लिया है कि मेरे सिद्धान्त तुम्हारे 'ड्रैगॅन'के इशारेपर तोड़े-मरोड़े जा सकते हैं ? मार्क्स परम्पराका द्रोही नहीं, संस्कृति और सभ्यताका द्रोही नहीं। मार्क्सवादकी बड़ी शिक्षा ही यह थी कि सत्य-असत्यके निर्णयमें सभ्यता और शिष्टाचारको नहीं झुठलाना चाहिए; तानाशाही भाषामें बातें नहीं करनी चाहिए।

जादूगर : तो क्या हम मार्क्सवादी नहीं ?

मार्क्स : तुम ? तुम अपनेको मार्क्सवादी कहते हो, पर बात तानाशाहों-जैसा करते हो। तुम अपनेको जनताका सेवक कहते हो, पर गला उसीका काटते हो। तुम अपनेको समाजवादी कहते हो, पर हिटलर और मुसोलिनीसे स्पर्धा

करते हो। तुम अपनेको पंचशील और सहअस्तित्वका निर्माता कहते हो, पर युद्धको मार्क्सवादके लिए अनिवार्य बताते हो। तुम लाल लिबासमें जल्लाद हो, तुम क्रान्तिके नामको कलंकित करनेवाले लुटेरे हो, तुम बोर्जुवा युद्ध-लोलुपोंका विरोध करनेवाले स्वयं सबसे बड़े युद्ध-लोलुप हो। यानी, एक शब्दमें तुम ड्रैगॅन नहीं गिरगिट हो।

जादूगर : [तमतमाये हुए] बस चुप करो, मैं किसीसे उपदेश नहीं सुनना चाहता। मार्क्सवादकी टेक हमने इसलिए नहीं पकड़ी कि तुम्हें अच्छा समझते थे। हमें तो चियाङ् काइ शेक और उसके पूँजीवादी सहायकोंको मुँहकी खिलानेके लिए तुम्हारा नाम लेकर कॅम्युनिस्टोंका सहयोग चाहिए था। वह हमें मिला, ख़ूब मिला। आज देखते हो, [सीना तन जाता है] हमारे पास चीन-जैसा विशाल देश है, पैंसठ करोड़ जनता है। आज हम किसीसे कम नहीं; किसीके अधीन नहीं—तुम्हारे भी नहीं, कॅम्युनिस्टोंके भी नहीं। तुम और तुम्हारे अनुयायी हमारे अभियानमें साथ हों तो ठीक और [एक क्षण ठहरता है] न हों तब भी ठीक। हम आप ही तुम्हें दूधसे मक्खीकी तरह निकालकर फेंक देंगे। [मार्क्स गम्भीर होता जाता है] चीनको किसीसे सीखने या किसीको माननेकी ज़रूरत नहीं। चीन वीर सम्राटोंकी भूमि है। हम शक्तिका महत्त्व और उसका उपयोग दोनों जानते हैं। चलो तुम भी उधर कोनेमें खड़े हो जाओ।

[मार्क्सकी आत्मा कॅन्फ़्यूशियसके पास जा खड़ी होती है।]

जादूगर : [पीछेको दबके-सिमटे बैठे अपने शिष्यको बाँह पकड़कर आगेको लाते हुए] मेरे प्यारे बेटे चुन चेह चिह, सुनी तुमने

इन मुरदा खोपड़ियोंकी बकवास ! [ठहाका लगाता है] हमें उपदेश देते हैं—सत्यका, अहिंसाका, सहअस्तित्व-का ! छिः [थूकता है] मेरे बेटे, लो यह तलवार, [लबादेमें से निकालता है] और तीनोंकी छातीमें एक बार ही भोंक दो। शाबाश, लो [तलवार बढ़ाता है।]

शिष्य : [अचकचाता] मगर मास्टर, इनका अपराध ?

जादूगर : अपराध ? तुम ऐसा प्रश्न पूछते हो ? इतनी हिम्मत ? शायद तुम भी अमेरिकाके एजेण्ट हो, क्रान्तिद्रोही कुओ-मिण्टाङ्के एजेण्ट ?

शिष्य : मास्टर, मेरा अपमान आप नहीं कर सकते !

जादूगर : तो अपनेको क्या सम्मानित व्यक्ति समझते हो ? [ज़ोरसे हँसता है, और दूसरे ही क्षण उसी तलवारसे शिष्यको मारता है] ले, तू ही चल ! नीच, कुत्ता, प्रतिक्रियावादी ! [शिष्य एक चीख मारकर वहीं ढेर हो जाता है। जादूगर सामने देखता है, मगर वहाँ अब कोई नहीं है। जादूगर चिल्लाता हुआ स्टेजसे भागता है] कहाँ गये—कहाँ गये—एकको भी न छोड़ूँगा, एकको भी नहीं।

[तभी चौंककर आँखें मिचमिचाता हुआ विवेक उठकर बैठ जाता है।]

विवेक : ओफ़् कैसा डरावना सपना था !

[नेपथ्यसे युद्धकी आवाज़ें। तोपोंकी गरज। आगकी लपटें। भीत और त्रस्त पक्षियोंकी चीत्कार। स्टेजपर सवेरा होनेका उजाला। वातावरणमें भयानकता।]

विवेक : [बग़लकी तरफ़ देखते हुए] ऐं, रोज़ कहाँ गयी ? यहीं तो थी अभी।

[पीछेसे घायलोंका कोलाहल । कोलाहल निकट आता हुआ बढ़ता है। विवेक हकबकाया-सा उठकर परदेकी ओर देखता है । इधर-उधरसे अनेक घायलोंका प्रवेश ।] लगता है बोमदि लापर चीनियोंने हमला कर दिया। लोग कहते हैं रविवार सृष्टिकी रचना पूर्ण होनेका दिन है; इस दिन ईश्वर भी विश्राम करता है। लेकिन जिन्हें सृष्टिका विनाश ही अभीष्ट है, उन्हें विश्राम कहाँ। ये चीनी तो····[विवेक मुँह ही मुँह बुदबुदाता-सा घबराया हुआ लपककर नेपथ्यकी ओर जाता है। नेपथ्यमें युद्धास्त्रोंकी कड़कड़-हड़हड़ निरन्तर तेज़ होती जाती है। स्टेजके दाहिनी ओरसे क्यूला तथा अनेक औरतें बच्चे और बूढ़े अपना-अपना सामान लिये-दिये प्रवेश करते हैं। क्यूला बीस-बाईस बरसकी युवती है—गेहुँआ रंग, गोल-मटोल मुख। चेहरेपर थकान और निराशाके चिह्न, जगह-जगह जैसे धूल लगी हो। बाल खुले-खुले हैं। पूरी आस्तीनकी कुरती पहने है। कुरतीके ऊपर पखुरेपर चाँदी-का चौड़ा बाजूबन्द है। नीचे बिना घेरका सिमटा हुआ घाघरा है। कमरमें फेंटा, जिसका एक सिरा कन्धेपर-को फेंका हुआ है। कानमें पुराने ढंगका काँपनुमा गहना है, नाकमें लाल-सी चिपटी कील। एक मोटा ऊनी वास्कट-जैसा भी वह पहने है। पैर नंगे हैं।]

क्यूला : राम राम, ऐसी लड़ाई हमने नहीं देखी···छिः ! भगवान् जाने अभी क्या-क्या देखना बदा है।

[गट्ठर रखकर वह थकी-थकी आँखों आकाशकी ओर देखती है। स्टेजके बायीं ओरसे मिस रोज़ घबरायी हुई

आती है। पीछे-पीछे एक आदमी कन्धेपर उसके घायल पिताको लादे हुए है।]

रोज़ : यहीं लेटा दो भैया···· [वह आदमी घायल मिस्टर ओ'-ब्राएनको कन्धेसे उतारता है।]

ओ'ब्राएन : आह ! प्रभु यीशु।

रोज़ : ज़रा धीरेसे भैया। आह पापा क्या करूँ मैं, मैं क्या करूँ ! ईव्न फ़र्स्ट-एड सीम्स टु बि आऊट ऑव रीच। [इधर-उधर देखती है। ओ'ब्राएनको लिटाकर वह आदमी उनपर सीनेतक चादर ढँक देता है।]

आदमी : अच्छा मेम साहब, अब आप साहबको सँभालें। सिरमें बहुत चोट आयी है। देखिए न, पीछेसे मेरा कुरता ख़ूनसे रँग गया है [अपने कन्धेके नीचे पीठकी ओर इशारा करता है। कपड़ा ख़ूनसे भीगा हुआ है। रोज़ देखकर व्यथित हो जाती है।]

रोज़ : [व्यथा-घुले स्वरमें] अच्छा भैया [बटुआ खोलकर पाँच रुपयेका नोट उसकी ओर बढ़ाती है] मेरी यह छोटी-सी भेंट स्वीकार करो।

आदमी : [अजीब तरहसे रोज़की ओर देखता है] मेम साहब, मैं ग़रीब ज़रूर हूँ लेकिन इनसान हूँ। कुछ और नहीं कर सकता तो घायलोंकी इतनी सेवाका ही पुन्न सही।

रोज़ : तुम्हारी सेवा और मददका मोल नहीं दे रही भैया, तुम्हें इसकी ज़रूरत होगी इसलिए दे रही हूँ।

आदमी : ज़रूरत तो बहुत-बहुत है मेम साहब, मगर इसे मैं ले न सकूँगा। पौ फटनेके पहलेसे मैं घायलोंको ढोते-ढोते थक

गया हूँ। पर लगता है जैसे देहमें किसी देवताका बल आ गया है। इसे लिया नहीं [नोटकी ओर आँखसे संकेत करता है] कि वह बल टूट जायेगा। ना, ना मेम साहब, यह नोट देकर मुझे थकने मत दीजिए।

रोज़ : [विस्मयसे उसकी ओर देखती है] अच्छा भाई, प्रभु तुम्हें बल दें, तुम्हारी सहायता करें! [अपने घायल पिताके पास बैठ जाती है।]

ओ'ब्राएन : बेबी-बेबी, पानी आह!

रोज़ : लायी पापा····[घबरायी-सी उठती है, फिर अपनेसे ही] पानी!····[इधर-उधर नज़र दौड़ाती है। सामने बैठी क्यूलाके पास दौड़कर जाती है, मगर संकोचमें कुछ कह नहीं पाती—] सुनिए····[फिर मुड़ने लगती है।]

क्यूला : क्या चाहिए मेम साहब? तुम बहुत घबरायी हुई लगती हो।

रोज़ : सुनिए पापाको बहुत चोट लगी है [सिसकती है] पानी-पानी चिल्ला रहे हैं—सोचा शायद तुम्हारे पास कोई बरतन हो।

क्यूला : [गट्ठरमें-से टटोलकर टिनका कटोरा निकालती है] है क्यों नहीं, ये है। मगर पानीका सोता तो उधर जंगलमें पड़ता है।

रोज़ : तुम बरतन दो, मैं दौड़ जाऊँगी।

क्यूला : [रोज़की ओर देखकर कुछ सोचती हुई] अच्छा मेम साहब, तुम अपने बापूके पास बैठो, मैं अभी लायी पानी [रोज कुछ कहे कि उसके पहले ही क्यूला कटोरा लेकर दौड़ जाती है।]

[दूसरी ओरसे विवेकका प्रवेश। वह इस तरह आता है मानो किसीको ढूँढ़ रहा है। एकाएक उसकी नज़र उस ओर जाती है जहाँ अपने घायल पिताके ऊपर झुकी रोज़ बैठी है। विवेक उधरको लपकता है।]

विवेक : रोज़ – रोज़, किधर चली गयी थी ? मैं तो सारी बस्ती छान आया। तुम्हारे ईडेन टर्मिनसवाले बँगलेमें भी गया। एकदम सन्नाटा था—[पास पहुँचनेपर घायल मिस्टर ओ'ब्राएनको देखकर] यह क्या ? पापाको ले आयीं ? [नीचे बैठते हुए] ओफ़् इन्हें तो बहुत चोट लगी है !

रोज़ : हाँ विवेक, तुम्हें सोता छोड़कर गयी तब उस समय लगा कि भूल कर रही हूँ, मगर अब सोचती हूँ कि ठीक ही किया, नहीं तो पापासे—[फफक पड़ती है।]

विवेक : [घावकी ओर देखता है] कहाँ थे ये ?

रोज़ : [अपनेको सँभालती हुई बताती है] बँगलेके पास ही एक गिरजाघर है—

विवेक : हाँ हाँ, पूरबकी तरफ़ पड़ता है, कुछ। मैंने अभी-अभी देखा है उसे, दूरसे। किन्तु वह तो धू-धू करके जल रहा था।

रोज़ : हाँ ये शैतान तो प्रभुके पूजाघरोंको भी खड़ा नहीं रहने देंगे। पापा हमला होनेके बाद वहीं चले गये थे। बँगलेमें सन्नाटा देख मैं बड़े सोचमें पड़ी तभी जैकी कहींसे आकर मेरे पैरोंपर लोटने लगा। उसीके पीछे-पीछे चलती गिरजाघर पहुँची। मगर इनसे कुछ कहूँ कि उसके

पहले एक शेल ठीक गिरजेकी बुर्ज़पर गिरा। मैं अभागिन तो बच गयी, पर पापा···[सिसकती है]

ओ'ब्राएन : बेबी, पानी–पा–पा–नी····

विवेक : पानी ? मैं देखता हूँ [उठकर चलनेको होता है, तभी–]

क्यूला : [कटोरेमें पानी भरे हुए, लम्बे-लम्बे डग भरती हुई आती है] लो मेम साहब। अरे तुम तो रो रही हो ! रोनेसे क्या होता है भला अब देखो, मेरा घरवाला दो महीनेसे लापता है। सुना, चीनियोंने पकड़ लिया उसे; मगर मैं बिलकुल नहीं रोती।

[रोज़ डबडबायी हुई कृतज्ञ आँखों एक क्षण उसकी ओर देखती है, फिर हाथसे पानीका कटोरा ले लेती है।]

रोज़ : पापा पानी····पानी पापा····[विवेककी सहायतासे रोज़ पिताके कन्धों तले बाँह डालकर सिर ऊँचा करती है और पानी पिलाती है। दो घूँट ही पीकर 'आह आह' करते मिस्टर ओ'ब्राएन फिर निढाल-से हो जाते हैं।]

विवेक : मेरे बैगमें कुछ फ़र्स्ट एडका सामान है। तुम ज़रा इन्हें सँभालो, मैं जल्दीसे पट्टी बाँध दूँ। ख़ून बहना अभीतक बन्द नहीं हुआ।

ओ'ब्राएन : [अत्यन्त क्षीण और टूटे-टूटे स्वरमें] बेटे ! रोज़की ममता खींच लायी यहाँ। अच्छा होता वहीं प्रभुके चरणोंमें····

विवेक : ऐसा न सोचें, मिस्टर ओ'ब्राएन, आप जल्दी ही ठीक हो जायेंगे। [विवेक पट्टी आदि निकालनेकी कोशिश करता है। मिस्टर ओ'ब्राएनका हाथ लड़खड़ाता हुआ रोज़के सिरकी ओर उठता है। रोज़ हिचकती हुई रो उठती है।]

ओ' ब्राएन : छिः रोती है बेबी ! आइरिश खून इतना पतला हो गया ?···बेबी, धीरज···।

[रोज़के सिरपर काँपता-काँपता हाथ फेरते हैं। विवेक बैगमें-से पट्टी आदि निकालकर बाँधनेके लिए बढ़ता है।] रहने दो बेटे यह अब !···मैंने तुम्हें पहचाना नहीं।

रोज़ : पापा ये मिस्टर विवेककुमार, विवेककुमार रॉय जर्नलिस्ट हैं। मैं तेजपुरसे इन्हींके साथ आ सकी। इन्होंने बड़ी मदद की।

ओ'ब्राएन : अच्छा-अच्छा !···ऐसे ही बेटे···तेजपुर तक···बेबी ···प्रभु···प्र···[हाथ नीचेको ढुलक जाता है। फिर उँगलियोंमें हलकेसे हरकत होती है और होंठ फड़कते हैं; जैसे चेतना खिंचती हो और "प्रभु !···यीशु !···" पुकारते हों। रोज़ सुबकती-सुबकती उनके ऊपर झुक पड़ती है। विवेक भी पास ही आ बैठता है और उनके दोनों हाथ धीरेसे उठाकर सीनेपर विशेष मुद्रामें रख देता है। देखते-देखते उनका सारा शरीर जैसे एक बार हलकेसे झन-झनाता है और गरदन एक ओर झूल जाती है।]

रोज़ : [बुक्का फाड़कर रोती पिताके शवपर गिर जाती है] पापा ! पापा !! पा····पा····[टूट-टूटकर रोती है।]

विवेक : [स्तब्ध हुआ-सा रोज़की पीठपर हाथ फेरता है] र-रोज़····[गला भर आनेसे आगे कह नहीं पाता।]

क्यूला : अब इन्हें छोड़िए मेम साहब, पंछी तो चला गया। माटीपर सिर धुननेसे क्या फ़ायदा ! [क्यूला रोज़को

पिताके शवपर-से उठाती है। विवेक चादर ऊपर तक खींचकर उनका मुँह ढँक देता है।]

रोज़ : [क्यूलाके हाथोंसे अपनेको छुड़ाकर फिर पितासे लिपट जाना चाहती है] क्या बिगाड़ा था मेरे पिताने किसी-का ! सदा अपने प्रभु यीशुमें ही रहे वे तो ! [विवेक उसे सँभालता है। उसके सिरको, पीठको सहलाता है। उसकी हिचकियाँ बँधी हैं। क्यूला परदेके पीछे चली जाती है।]

विवेक : जो होना था, हो गया। रोज़ ! अब आगेकी बातें सोचो। मैं देखता हूँ, शायद स्ट्रैचर या इस तरहकी कोई और चीज़ मिल जाये। इनके शरीरको यहीं इन्हीं पहाड़ियोंमें दफ़न कर दो इसी धरतीमें, जिसकी ममतामें उन्होंने जान दे दी।

[विवेक परदेके पीछे चला जाता है कुछ समय बाद वह एक स्ट्रैचर ले आता है। और उसे ओ'ब्राएनके मृत शरीरके पास ही फैला देता है।]

विवेक : [सहानुभूतिके साथ समझाते हुए] रोज़, अब छोड़ो इन्हें। [विवेक ओ'ब्राएनके शरीरको सिरकी तरफ़से पीठके नीचे हाथ डालकर उठाता है।] ज़रा पैरोंकी ओर सँभालना। [रोज़ धीरेसे उठकर पैरोंको पकड़कर उठानेका प्रयत्न करती है। वह बरबस होंठोंको दबाकर रुलाई रोकनेका प्रयास करती है किन्तु रोक नहीं पाती और पुनः बिफर-कर रो पड़ती है। दोनों मिलकर ओ'ब्राएनके शरीरको स्ट्रैचरपर रखते हैं। स्ट्रैचर उठाकर दोनों चलनेको ही हैं कि क्यूला दौड़ती हुई आती है।]

क्यूला : सुना बाबू ! सोव्या कह रही है कि मैं झूठे दूराँकी आशा

किये हूँ। टूराँको चीनियोंने मार डाला ! टूराँको चीनियों-ने मार डाला !

[वह अपने हाथोंमें मुँह छिपाकर फूट-फूटकर रो पड़ती है।]

विवेक : ऐसा नहीं हो सकता क्यूला ! जब तुम्हारा दिल कह रहा है कि टूराँ जीवित है, तो भरोसा रखो वह अवश्य जीवित होगा।

क्यूला : [सिसकती हुई] मगर सोव्या जो कह रही है कि चीनियोंने उसे मार डाला ?

विवेक : सोव्या झूठी है, उसे क्या पता ?

क्यूला : [खुश होकर] सच बाबू ! हाँ, सोव्याको क्या पता ! [आश्वस्त भावसे गरदन हिलाती है] सोव्या कहाँसे जान सकती है भला। सोव्या झूठी है। सोव्या झूठी है। [क्यूला चिल्लाती हुई एक ओरको चली जाती है।]

विवेक : उठो रोज़ ! अब इसमें देर करनेसे क्या लाभ ?

[रोज़ एक तरफ़से और विवेक दूसरी ओरसे स्ट्रैचरको पकड़कर उठाते हैं तभी नेपथ्यसे पुनः युद्धास्त्रोंकी गड़-गड़ाहट गूँजने लगती है। परदेके पीछे जैसे आग लगी हो। पूरा क्षितिज गेरुए प्रकाशमें रँगकर बड़ा उदास लगने लगता है। सामने फूलोंके कुछ पौधे हैं जो हवाकी लहर-पर डरे-डरे-से हिलते हैं। तेज़ हवा चल रही है। एक तरहकी सरसराहटकी ध्वनि नेपथ्यसे निरन्तर उठती रहती है। मंचपर एक ओर किसी सैनिकका शव पड़ा हुआ है। जिसकी तरफ़ अभीतक मानो किसीका ध्यान ही नहीं गया।]

विवेक : यह कौन सोया है इस तरह ?

रोज़ : यह तो किसी मरे हुए सैनिककी लाश मालूम होती है।

विवेक : मगर यहाँ लाश आयी कहाँसे ? हाँ, [रुककर कुछ सोचते हुए] आक्रमणके बाद बहुत-से घायल सैनिकोंको स्ट्रैचर-पर रखकर सुरक्षित स्थानमें पहुँचाया जा रहा था। उन्हींमें कोई एक बीचमें ही मर गया, शायद।

रोज़ : हो सकता है।

विवेक : चलो, अवसर मिला तो इसे भी कहीं धरतीमें गाड़ देंगे। नहीं तो जंगली जानवर बेचारेकी दुर्गति कर डालेंगे।

[दोनों स्ट्रैचर लेकर आगे बढ़ जाते हैं। युद्धास्त्रोंकी गड़गड़ाहटोंके बीच मंचपर एक ओरसे शीकूका प्रवेश। वह धीरे-धीरे चारों तरफ़ देखता हुआ, छिपता हुआ-सा चलता है। जैसे किसीके भी सामने नहीं होना चाहता। एक क्षण सन्नाटा। तभी सहसा राइफ़ल छूटनेकी आवाज़ें गूँज उठती हैं। शीकू एकाएक इन आवाज़ोंको सुनकर लड़खड़ाता है। हर आवाज़से उसके पैर काँप-काँप उठते हैं। पहाड़ी चोटियोंकी ओर ग्लानि और पीड़ासे वह देखता है। सामने अब भी लपटें उठ रही हैं। अपनी दोनों मुट्ठियोंको भींचकर वह बड़ी घृणासे उन लपटोंकी ओर हिलाता है, जैसे उन्हें घूँसे मार रहा हो। फिर थककर खड़ा हो जाता है। धीरे-धीरे चलता है। तभी उसकी नज़र सामनेके लाल-लाल फूलोंपर पड़ती है। वे जंगली गुलाबके फूल हैं। शीकू ग़ुस्सेमें उधरको उछलता है और एक फूल तोड़ लेता है। फूल तोड़ते समय जैसे उसके हाथमें कहीं तीखा काँटा गड़ गया हो, वह हाथ हिलाता और फूलको दोनों हाथोंसे नोच-नोचकर ज़मीन-

पर फेंक देता है। फिर दाहिने हाथकी तर्जनीको बाँये हाथ-से जोरसे दबाता है। जैसे काँटा-लगे स्थानसे विषैला खून गार रहा हो। पुनः उस खून-रँगो तर्जनीको मुँहमें डाल लेता है।

इसके बाद तो जैसे शीकूको बहुत क्रोध आ जाता है। वह गुस्सेमें दौड़-दौड़कर हर फूलको तोड़ता है। पंखुरियाँ बिलगा-बिलगाकर जमीनपर फेंक देता है। तभी इस दौड़-धूपमें उसका पैर पास पड़ी लाशसे टकरा जाता है। शीकू समझता है कि कोई सोया है। इसलिए थोड़ा घबराता है। फिर उसके पास जाकर उसके पैरोंमें अपने पैरके अँगूठेसे खुदक्का मारता है।]

शीकू : ए ओ-ओ वाय-वाय ! [मानो कह रहा है कि यहाँ क्यों सोया है, कहीं और जाकर क्यों नहीं सोता। वह आदमी न हिलता है न डुलता है। शीकू इस बार जोर-जोरसे उसके तलवेमें ठोकरें लगाता है। इसपर भी जब वह आदमी नहीं हिलता-डुलता तो शीकू आश्चर्यसे झुक जाता है और उस मरे सैनिकको पकड़कर झकझोरता है। खींचनेसे वह चित्त हो जाता है। यह जानकर कि यह मरा हुआ आदमी है, शीकू डरकर चीख पड़ता है।]

ओ-ओ-ओ-ओ ! [डरके मारे जैसे उसका सारा शरीर काँप रहा हो] बाबा, बाबा !!

[वह उछलकर एक क्षणको परे जाकर खड़ा हो जाता है। फिर धीरे-धीरे लाशके पास आता है। घुटने टेककर बैठ जाता है। बड़े प्यारसे उस आदमीके मुख और बालों-को सहलाता है। फिर उसके पैरोंको जहाँ उसने ठोकरें

मारी थीं, ममतासे मलता है। दोनों हाथ जोड़कर उसके पैरोंको छू-छूकर नमस्कार करता है। सहसा वह सिरको उँगलियोंसे ठोकते हुए कुछ सोचता है। उठकर ज़मीन-पर इधर-उधर देखता और फिर एक स्थानपर धूलवाली ज़मीनको कुरेदकर लाशके डूबने-भर गड्ढा बनाता है। फिर लाशके पास जाकर एक हाथ उसकी गरदनमें और दूसरा जाँघोंके नीचे लगाकर उठाता है। धीरे-धीरे चल-कर उस लाशको उठाकर गड्ढेके पास लाता और घुटने मोड़कर उसे गड्ढेमें सुला देता है। मंचपर एक पटरा हटाकर वह यह काम करता है। पटरेको फिर ठीक जगहपर लगाकर वह ऊपरसे मिट्टी फैला देता है : मानो लाशको ढँक रहा है। यह सब काम करते हुए उसे जैसे एक अचिन्त्य ख़ुशी और प्रसन्नताका अनुभव हो रहा है। फिर वह मंचपर इधर-उधर ताक-कर देखता है। उसने फूलोंको पंखुरियाँ नोच-नोचकर फेंकी थीं, उन्हें एक-एक करके इकट्ठा करता और क़ब्रकी मिट्टीपर फैला देता है। फिर घुटने मोड़कर लाशको दो बार प्रणाम करता है। वहाँसे एक तरफ़ हटकर, दोनों हथेलियोंको आपसमें रगड़कर उनकी धूल झाड़ता है। पास ही बैठकर एक बीड़ी निकालकर जलाता-सुलगाता है : नेपथ्यसे पुनः तोपोंकी गड़गड़ाहट होती है। शीकू इस बार खड़ा होकर, दोनों पैरोंको फैलाकर, अकड़-कर उस गड़गड़ाहटको सुनता है और लपटोंको देखता है। ज़ोरसे बीड़ीका कश खींचता है और कड़वा मुँह बनाकर सामनेके क्षितिजको देखता रहता है।

उसी समय मंचपर एक ओरसे विवेक और रोज़ आते

हैं। रोज़ अब भी सिसक रही होती है। उन्हें देखकर शीकू सहसा हड़बड़ाकर भागता है। उसके पैरोंकी आवाज़से चौकन्ना होकर विवेक उधर देखता है।]

विवेक : [आश्चर्यसे] अरे यह तो वही शीकू है ! शीकू ! [विवेक उसके पीछे दौड़ता है, मगर शीकू तेज़ीके साथ भाग जाता है, तो विवेक चुपचाप वापस लौट आता है। हाँफते हुए।] वही शीकू था, तेजपुरके होटलका चौकीदार, यहाँ क्या कर रहा था यह शीकू ! [अचानक विवेक बहुत गम्भीर हो जाता है] कुछ समझमें नहीं आता। आख़िर यह हमारा इस तरह पीछा क्यों कर रहा है ? [तभी उसका पैर क़ब्रकी मिट्टीसे टकरा जाता है] ऐं, यह क़ब्र कहाँसे आयी यहाँ ? और वह लाश ? वह लाश ? कहाँ गयी यहाँसे ? कहीं शीकूने तो नहीं बनायी यह क़ब्र ?

रोज़ : वह क्यों बनायेगा क़ब्र ! वह तो किसी भारतीय सैनिक-की लाश थी न।

विवेक : हूँ [विवेकके चेहरेपर एक अजीब तरहकी परेशानी छा जाती है, रोज़ आगे बढ़कर एक स्थानपर बैठ जाती है। कुछ देर ख़ामोशी रहती है। रोज़को जैसे कुछ याद आ जाता है और वह फिर सिसक-सिसककर रोने लगती है।]

विवेक : [पास आकर रोज़के बग़लमें बैठते हुए] तुम फिर रोने लग गयीं ? सुबहसे बस रोये जा रही हो। इस तरह लगातार रोते रहनेसे ही क्या लाभ ? तुम्हारे पापा तो नहीं आयेंगे इससे ?

[रोज़ कुछ नहीं बोलती। मुड़े हुए घुटनेपर सिर रखकर वैसे ही सुबक-सुबक रोती रहती है।]

विवेक : [थोड़ी खीझकर] रोज़ ! अब तो बन्द करो यह सब।

रोज़ : [चिढ़कर] मैं रोती हूँ, मुझे रोने दो। तुम क्यों परेशान हो रहे हो ?

विवेक : मगर इस तरह तुम कबतक रोती रहोगी ? माना कि तुम्हें बड़ी पीड़ा पहुँची है, बड़ा दुःख है; मगर इसमें तुम्हारा बस भी क्या था। अब देखो न, चारों तरफ़ तो रोनेवाले ही पड़े हैं।

रोज़ : विवेक, तुम अपना यह उपदेश बन्द करो। मुझे जी-भर-कर रो लेने दो। मेरी ज़िन्दगीमें अब रोनेके अलावा बचा भी क्या है। ले-देकर मेरे सम्बन्धमें सिर्फ़ पापा बच रहे थे। वे भी मुझे छोड़कर चले गये। मैं इसपर रोऊँ नहीं तो क्या हँसूँ। [ज़ोरसे रोने लगती है।]

विवेक : तुम बात-बातपर नाराज़ हो जाती हो रोज़ !

रोज़ : [ग़ुस्सेसे तिनकते हुए] हाँ हाँ, हो जाती हूँ नाराज़। मैं बेवक़ूफ़ हूँ, क्रोधी हूँ। बस ?

विवेक : रोज़ ! तुम्हें क्या होता जा रहा है यह ?

रोज़ : मैं पागल हो रही हूँ ! होने दो। तुम भगवान्‌के लिए मुझे मेरे हालपर छोड़ दो।

[एक तरफ़ मुँह फेरकर बैठ जाती है। विवेक एक क्षण चुपचाप उसे देखता रहता है। फिर धीरेसे हटकर चला जाता है। मंचपर सिर्फ़ रोज़ बच जाती है, जो अपनी हथेलियोंसे आँखें मूँदकर उसी तरह रोये जा रही है।]

[परदा]

अंक तीन : दृश्य तीन

[रविवार १८ नवम्बरकी शाम। क़रीब पाँच बजे हैं। बोमदिलापर चीनी सेनाका अधिकार हो गया है। बस्तीसे दक्षिण-पश्चिममें कुछ दूरीपर एक चट्टानसे पीठ टिकाये विवेक बैठा हुआ है। उसके हाथमें गुलाबका एक फूल है जिसे वह बड़ी पीड़ा-ममतासे देखता होता है।

वह कभी-कभी अपने बायें कन्धेपर गरदन मोड़कर टिका लेता है और डबडबायी आँखों बोमदि लाकी बस्तीको ताकता होता है। उधरका आसमान लाल गेरूके रंगके उजासमें रँगा हुआ है। आसमानमें चीलोंका झुण्ड शोर करते हुए उड़ता है। पूरा वातावरण बहुत ग़मगीन और संजीदा है। सामनेसे हारा-थका एक वृद्ध नव-दस वर्षके एक बच्चेके कन्धेका सहारा लिये मंचपर आता है। बच्चा एक फटा-सा, तार-तार झूलता कोट पहने है। उसके सिरपर कानोंको ढँकती हुई उठी-उठी गोल टोपी है। पैर घुटने तक धूलमें सने हैं। वृद्ध बहुत झुक गया है। वह क़रीब-क़रीब धनुषाकार होकर बच्चेके कन्धेपर हाथ रखे घसिटता हुआ-सा चलता है। उसकी पोशाक कामेंगके आदिवासियों-जैसी ही है।]

वृद्ध : ओल्या बेटे ! [साँसें फूलती हैं] किधरको लिये जा रहा है ? [वह दाहिने हाथसे बच्चेके कन्धेका सहारा लिये है, बायाँ हाथ आसमानकी ओर उठाकर हिलाता है, जैसे जीवनकी निरर्थकतासे ऊब चुका है। उदास डरी-डरी आँखों आसमानकी ओर देखता है] भगवान्, अभी और क्या-क्या देखना पड़ेगा। [आँखें भर आती हैं, वृद्ध अपने

काँपते होठको दाँतोंसे दबाकर जैसे व्यथाको रोकनेकी कोशिश करता है ।]

ओल्या : [वृद्धके हाथको अपने नन्हें-नन्हें हाथोंसे पकड़कर] बाबा ! तुम रोते हो ? मैं जो तुम्हारे साथ हूँ । सभी इधर ही तो गये हैं । घबराओ मत बाबा ! [वृद्धको सिसकते देख बच्चा खुद भी रुँआसा हो जाता है ।]

वृद्ध : [बच्चेको रोने-रोनेको होते देख सहसा जैसे कुछ ध्यान आता है और वह जल्दी-जल्दी अपनी आँखें पोंछकर मुसकराने लगता है] मैं रो कहाँ रहा हूँ ओल्या बेटे ! मैं तो हँस रहा हूँ । देख न मैं तो कितना ख़ुश हूँ । मैं भला रोऊँगा ! मेरा कलेजा पत्थरका है बेटे, पत्थरका ! अपनी आँखोंके सामने गायकी तरह चिल्लाती तेरी माँ-की बेबसी देखकर भी यह फटा नहीं [छातीमें घूँसे मारता है] पत्थर ! पत्थर ! [वृद्धका गला आँसुओंसे बिलकुल रुँध-सा जाता है] हाय बेचारी····! मैं अब भी कैसे ज़िन्दा हूँ, हे भगवान् ! [फूट-फूटकर रो पड़ता है ।]

ओल्या : मेरी माँ अब नहीं आयेगी बाबा ?

वृद्ध : [वैसे ही रोते हुए] नहीं बेटे ! अब वह कभी नहीं आयेगी, कभी नहीं । [वृद्धको रोते देखकर विवेक अपने स्थानसे उठकर उनके पास आता है ।]

विवेक : क्या हुआ बाबा ! तुम इस तरह रो क्यों रहे हो ?

वृद्ध : [गीली आँखें उठाकर विवेकको देखता है] अपने भाग्य-को रो रहा हूँ बाबू ! अपने भाग्यको !

विवेक : तुम इस बच्चेकी माँके बारेमें कुछ कह रहे थे, क्या हुआ उन्हें ?

वृद्ध : उसे चीनी उठा ले गये बाबू ! चीनी····!

विवेक : चीनी उठा ले गये ? कहाँसे, कब ?

वृद्ध : रास्तेमें बाबू । इस बच्चेको प्यास लगी । और वह कटोरा लिये झरनेको ओर गयी । बस जाने कहाँ छिपे थे वे राक्षस, पीले शैतान !····बेचारी गायकी तरह चिल्लाती रही । ओल्या दौड़ा तो मैंने इसे पकड़कर छातीसे चिपका लिया बाबू ! मैं कायर हूँ । मैं नीच हूँ । मैंने सोचा बाबू कि वह तो गयी ही, यह निशानी भी न छिन जाये मुझसे ? बस इसे लेकर धीरेसे छिप गया सरकार !

[ग्लानिसे छटपटा उठता है ।]

विवेक : तुम लोग कहाँसे आ रहे हो ?

वृद्ध : तवाङ्के पास अपनी बस्ती थी बाबू ! जब हमारे मुलुक-पर हमला हुआ तो हम बस्ती छोड़कर इधरको मैदानकी ओर चल पड़े । जाने कैसे चलते रहे, उसकी बात न पूछो बाबू ! ये दिन जैसे कटे, वैसे किसी शत्रुके भी न कटें !

विवेक : जो हुआ उसे भूल जाओ बाबा । धीरज धरो । अब डर-की कोई बात नहीं । आगे चले जाओ इधरसे, तुम्हें बहुत-से लोग मिलेंगे तुम्हारे-जैसे ही, दुःखी, सताये हुए । यह देखो [हाथ उठाकर बस्तीकी ओर संकेत करता है] बोमदि लाका क़स्बा आगकी लपटोंमें झुलस रहा है । सुबहसे लोगोंका ताँता लगा है । बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ सभी सहमे-सहमे, डरे हुए लगातार चले आ रहे हैं । सरकारने आगे एक कैम्प डाल रखा है, वहाँ तुमको भी कोई कष्ट न होगा । जाओ ।

वृद्ध : अच्छा बाबू ! [वह बच्चेके रूखे बालोंमें हाथ फेरता है ।]

ओल्या बेटे, आओ चलें ।

[लड़का वृद्धके हाथको पकड़कर अपने कन्धेपर रख लेता है । एक बार विवेककी ओर देखता है और चुपचाप चल देता है । दोनों धीरे-धीरे मंचके एक ओरसे निकल जाते हैं । विवेक चुप उन्हें जाते हुए देखता रहता है ।]

विवेक : आँसू ! आँसू····चारों तरफ़ आँसुओंकी नदी उमड़ रही है । जाने कितनी देरसे देख रहा हूँ उदास, थके हुए, तड़पते, क्रोध और ग्लानिसे उफनते मनुष्योंकी क़तारपर क़तार चली जा रही हैं । कहीं इसका अन्त भी होगा या नहीं ? [विवेक पुनः उसी चट्टानसे पीठ टिकाकर बैठ जाता है । पास पड़े गुलाबके फूलको उठाकर वह उसे नचा-नचाकर देखता है ।]

विवेक : बोमदि ला, गार्डेन सिटी, फूलोंकी बस्ती [लम्बी साँस खींचते हुए] विदेशी आततायी शत्रुओंके पैरोंसे रौंदी जा रही है । क्या किया था इस बस्तीने ? कौन-सा अपराध था इन भोले-भाले जंगली निवासियोंका ? ये तो अपनी खेती-बारीके शान्तिपूर्ण कामोंमें लगे हुए थे । इन्होंने कभी राजनीतिकी बात भी नहीं सोची ।

[किसी एक बिन्दुपर उसकी आँखें टिकी होती हैं, जैसे उसे यह सब सोचनेमें बहुत पीड़ाका अनुभव हो रहा हो ।] चीनी शासक हमें मुक्ति दिलानेके लिए बेचैन हैं । वे भारतीय जनताके स्वयम्भू शुभचिन्तक बन गये हैं । आज बोमदि लामें एक भी घर साबूत नहीं बचा । ग़रीब लोगोंके पसीने और ख़ूनकी कमाई भाड़ेके सैनिकोंके पेटमें झोंक दी गयी । घरोंके दरवाज़े और खिड़कियाँ तक उठाकर ले

गये। ढोरोंको मारकर खा गये। [विद्रूप हँसी हँसता हुआ] हुँह, ये हमें मुक्ति दिलायेंगे!

[सामनेसे दौड़ती हुई क्यूला आती है। उसके सिरके बाल खुले हुए हैं। पैर लहू-लुहान हैं, जैसे वह इनकी चिन्ता किये बिना पहाड़ोंमें दौड़ती रही है।]

क्यूला : [अपने-आप] तू जाने कहाँ होगा दूराँ! [सहसा उसकी दृष्टि चट्टानसे पीठ टिकाकर बैठे हुए विवेकपर पड़ती है। वह झपटकर उसके पास जाती है।] क्यों बाबू! तुम यहाँ छिपकर क्या बैठे हो? उधर मेम साहब रो रही हैं! मैंने तो उन्हें बहुतेरा समझाया कि बीबीजी अब रोना-धोना बेकार है। रोनेसे कोई गया वापस लौटता है? अब देखो न मेरे घरवालेको गये तीन महीने हो गये। उसे जंगल-जंगल, पहाड़-पहाड़ हेरती फिर रही हूँ। रोने बैठ जाऊँ तो क्या वह मिल जायेगा?

विवेक : [सहानुभूति और आदरका भाव लिये] तू बहुत समझदार है क्यूला! इस वक्त हमारे देशको तेरी-जैसी नारियाँ चाहिए।

क्यूला : धत् बाबू! तुम समझते हो कि मैं बहुत समझदार हूँ। पर मेरा घरवाला तो मुझे हमेशा बेवकूफ़ कहता था!

विवेक : अच्छा!

क्यूला : हाँ, कहता था कि तू कुछ नहीं समझती। तुझे तो यह भी नहीं मालूम कि एक रुपयेमें कै नये पैसे होते हैं। अब तुम्हीं कहो बाबू! यह कौन-सी ज़रूरी बात है कि इसे जाने बिना क्यूलाका काम न चलेगा। रोज़ तो

रुपयेके पैसे बदल जाते हैं। ज्यों-ज्यों इनसान छोटा हो रहा है, त्यों-त्यों पैसा भी नन्हा होता जा रहा है, है कि नहीं ?

विवेक : [हँसना चाहता है, पर हठात् हँसी रोक लेता है] हाँ क्यूला, तू ठीक ही कह रही है।

क्यूला : [.खुश हो जाती है। तभी उसके चेहरेपर एक अजीब तरहका खिचाव-सा आ जाता है। जैसे किसीने उसकी सभी आँतोंको मुट्ठीमें बटोरकर खींच दिया हो] टूराँ आयेगा। न बाबू ! तुम तो समझदार हो। मेम साहब कहती थीं कि तुम्हारे पास सबकी ख़बर रहती है। टूराँकी भी तो कुछ ख़बर होगी ?

विवेक : हाँ क्यूला ! टूराँकी भी ख़बर है मेरे पास। वह एक-न-एक दिन ज़रूर आयेगा।

क्यूला : [रुँआसी होती हुई] मगर····मगर वह सोव्या जो कह रही थी कि टूराँको चीनियोंने मार डाला ?

विवेक : सोव्या झूठी है।

क्यूला : हाँ, सोव्या झूठी है। झूठी ही नहीं सरकार बुद्धू भी है। भला तुम्हीं सोचो बाबू कि यह कैसे हो सकता है कि घरवाला मर जाये और मेरेको ख़बर न हो। मेरा हिया कभी धोखा नहीं देता बाबू !

विवेक : [उसकी बातोंसे दुःखी होकर लम्बी साँस लेते हुए] नहीं-नहीं क्यूला, तू घबरा नहीं, धीरज रख। तेरा टूराँ ज़रूर आयेगा।

क्यूला : हाँ, बाबू वह आयेगा ज़रूर, पर इतनी देर क्यों कर दी

उसने ? [प्रसन्नतासे चेहरा चमक उठता है] तुम बहुत अच्छे हो बाबू ! मेम साहबको भी तो थोड़ा धीरज बँधाओ न ! जाने कबसे वे उसी तरह बैठकर रो रही हैं। कुछ खाया-पीया भी न होगा बेचारीने !

विवेक : मैं तो समझाकर थक गया क्यूला ! वे कुछ सुनतीं ही नहीं।

क्यूला : अच्छा, तो मैं जाकर समझाती हूँ उन्हें।

[टूराँ आयेगा, टूराँ आयेगा चिल्लाती हुई क्यूला चली जाती है।]

विवेक : पागल न हो जाये कहीं। न जाने इस लड़ाईमें कितनी युवतियोंके पति लौटकर नहीं आयेंगे। कितने अबोध बच्चोंकी आखें अपने पिताओंकी प्रतीक्षा करती पथरा जायेंगी। कितनी माताएँ अपने लाड़लोंके लिए घरकी देहरीपर आँखें बिछाये बैठी रह जायेंगी।

रोज़ : और तुम्हारी माँ विवेक ? [एक ओरसे रोज़ आती है और विवेकके पास ही बैठ जाती है] वे क्या सोच रही होंगी ? तुम्हें याद है न कि तुमने उन्हें जल्दी ही पत्र लिखनेका वचन दिया था ? [विवेक नहीं बोलता]

रोज़ : तो तुम मुझसे नाराज़ हो ? [विवेक वैसा ही चुप रहता है। रोज़ अन्यमनस्क भावसे सामनेको देखती हुई कहती है] मैं तुमसे बिना पूछे चली गयी। तुमसे बिना पूछे मैं अपने घायल पिताको वापस ले आयी। तुम्हारे बार-बार कहनेपर भी मैंने रोना बन्द नहीं किया। तुम्हारे उपदेशों-को मैं ठीकसे समझ न सकी, यही न ?

विवेक : तुम बहुत परेशान हो रोज़। [वह एक क्षण चुप रहता है,

जैसे बात करनेकी शक्ति बटोर रहा हो। फिर लम्बी साँस छोड़ते हुए] तुम्हीं क्यों, सभी परेशान हैं। और इस तरहकी परेशानी तो और भी अधिक दुःखद होती है, जिसका कोई कारण नहीं होता। [एकाएक उसके चेहरे-पर आश्वस्तकारक ममता दौड़ जाती है] किन्तु सोचो तो कि क्या हम कटे-कटे या अलग-अलग अपने दुःखको झेल लेंगे ? मुझे इस बातसे पीड़ा नहीं हुई रोज़ कि तुम मुझसे बिना पूछे चली गयी। कुछ चन्द घण्टोंका ही तो साथ था न हमारा ? फिर उसके लिए तुम अपना व्यक्तिगत अधिकार मुझे सौंप दो, यह मैंने कब कहा। इसी स्वतन्त्रताके लिए तो हम लड़ रहे हैं। इसीकी रक्षाके लिए तो हर विपत्ति सहनेके लिए तैयार हुए हैं ?

रोज़ : [तनिक तमतमाते हुए] फिर, फिर किस बातपर नाराज़ हो गये तुम ?

विवेक : मैं नाराज़ कहाँ हूँ रोज़ ! मुझे एक क्षणके लिए अभिमान ज़रूर हुआ था कि रोज़ मेरी बात मानकर अपनेको ख़तरे-में नहीं डालेगी। [अचानक उसकी आँखें रोज़के चेहरेपर टिक जाती हैं, रोज़ गरदन झुका लेती है।] मेरी बात न मानकर तुमने मेरी दृष्टिमें अपना महत्त्व बढ़ाया ही रोज़, घटाया नहीं। ममता और कर्तव्यके नामपर आगमें कूदते समय तुम यदि रुक जातीं तो मुझे एक क्षण प्रसन्नता तो होती कि मेरी बातोंका तुमने सम्मान किया, किन्तु वह क्षण रोज़के व्यक्तित्वके उस पक्षको तो न उभार पाता जो आज साहस और निर्भीकताके प्रकाशसे जग-मगा रहा है।

रोज़ : यह तो कहनेकी बात हुई। मैं तो नाराज़ीका कारण जानना चाहती हूँ।

विवेक : कारण यह था रोज़ कि विवेकको तुमने इतना दुर्बल समझा था कि एक क्षण मेरी सुरक्षाके नामपर तुम्हारा मोह बलशाली सिद्ध हुआ।

रोज़ : बातको फिर छिपा गये तुम। साफ़ क्यों नहीं कहते ?

[विवेकके चेहरेपर एक अद्भुत अनदेखी चमक छा जाती है।]

विवेक : मुझे ग़ुस्सा आया था रोज़, इसलिए कि तुम व्यक्तिगत क्षतिकी पीड़ासे असहाय-जैसी हो गयीं। तुम्हें पास ही मरते दूसरे घायलोंकी याद न पड़ी। तुम अपने दुःखसे शीघ्र छूटकर बृहत्तर समुदायके दुःखको अपना लेनेके लिए तैयार न हो सकीं। लोग कहते हैं कि आदमीकी परीक्षा इस बातसे नहीं होती कि उसमें शक्तियाँ कितनी हैं, बल्कि इस बातसे कि वे शक्तियाँ अपने निजत्वको कितना तोड़ पाती हैं। रोज़के अन्दर वे शक्तियाँ थीं, इसीलिए मुझ उससे कुछ ऊँची आशाएँ भी रहीं। माना कि यह एक असाधारण व्यक्तिके लिए ही सम्भव है, किन्तु रोज़को मैं साधारण तो नहीं मान पाता।

[विवेक उत्तेजनाके बीचमें ही चुप हो जाता है। रोज़के चेहरेपर कुछ इस तरहका भाव है कि जैसे वह अपने अनचाहे किये बरतावके लिए क्षमाप्रार्थी है। वह विवेककी ओर गरदन मोड़ती है, पर चाहकर भी उधरको देख नहीं पाती।]

रोज़ : [बहुत दीनताके साथ] फ़ॉर गिव मी विवेक! आइ वाज़न्ट

इन माइ ओन। और सभी तो तुम-ही नहीं हो सकते! [विवेक उसकी ओर किंचित् गम्भीर होकर देखता है] डोण्ट टेक इट ए टॉण्ट, मैं अपने हृदयकी सारी सच्चाईके साथ कह रही विवेक!

विवेक : ह्वाट्ज़ पिक्यूलियर इन मी? ऐसा क्या है जो दूसरोंमें नहीं हो सकता?

रोज़ : अब देखो न [थोड़ा हकलाती-सी] अब यही कि तुमने मेरी कितनी सहायता की, और मैंने तुम्हारे साथ वैसा बरताव किया। फिर भी तुमने क्षमा दे दी। तुम्हारी माँ उतनी बीमार थीं, उन्हें एक मात्र तुम्हारा ही सहारा है, पर देशके लिए तुम अपने सुख-दुःखको भूल गये।

विवेक : [इस तरह सिर हिलाता है मानो सिरपर अनायास गिरे किसी पतले परदेको झटक रहा हो] नो-नो रोज़! आइ ऐम नॉट दैट। मुझे अपनी माँकी बहुत चिन्ता है। कहीं मुझे कुछ हो गया, तो मेरी माँको भी बड़ा दुःख होगा। [एक क्षण रुककर] और जब मैं तेजपुरसे चला तो ये सब बातें मेरे मनमें घुमड़ती थीं। डाकख़ानेसे माँके नाम तार दिया, तो भी जैसे कलेजा मुँहको आ रहा। तभी....? [विवेक चुप हो जाता है।]

रोज़ : क्या तभी? तभी क्या?

विवेक : [फिर उसी मुद्रामें जैसे उसका चेहरा चेहरा नहीं रोशनी-के सामने रखा कोई दर्पण हो] तभी मुझे लगा रोज़! मेरे जीवनकी वह निश्चित घड़ी आ गयी है, जिसकी प्रतीक्षा हर प्राणी जन्म-जन्मान्तरसे करता होता है।

रोज़ : कैसी घड़ी ? [इस मुद्रामें देखती है जैसे कहना चाहती है कि कुछ और स्पष्ट कहो ।]

विवेक : वह घड़ी रोज़, जब हर पौधा अपनी सार्थकताका फूल और फल धारण करता है । जब मनुष्यको लगता है कि आजकी घड़ी इन लहरोंमें कूद जाना ही चाहिए। क्योंकि ये लहरें भयंकर और उच्छल भले ही लगें, मनचाहे तटपर लगानेकी शक्ति तो केवल इन्हींमें है ।

रोज़ : मतलब ?

विवेक : मतलब यह रोज़ कि मुझे लगा कि मेरे तमाम बन्धन टूट गये हैं जो एक मनुष्यको हमेशा साधारण बनाये रहते हैं । मेरे लिए केवल दो रास्ते थे । एक तो यह कि मैं भी दूसरे पत्रकारोंकी तरह सुनी-सुनायी बातोंको रंगीन बनाकर भेजूँ और वाहवाही लूटूँ, जिससे मेरी आत्मा, यदि वह अब भी जीवित बची हो तो, प्रवंचनामें घुल-घुलकर साँसें तोड़ दे या इस ललकारते हुए क्षणकी चुनौती स्वीकार करूँ और मोर्चेपर जाकर एक जूझते राष्ट्र-की आत्माका प्रकाश देखूँ जो मेरी और देशके दूसरे लोगोंकी भी आत्माको हमेशा प्रकाशित रख सके ।

रोज़ : [आदरके साथ] और तुमने इस दूसरे रास्तेको चुन लिया विवेक ।

विवेक : हाँ, रोज़ ! मैंने इसी रास्तेको चुन लिया क्योंकि यही रास्ता मेरी तड़पती आत्माकी प्यास बुझा सकता था ।

रोज़ : और शायद इसीलिए तुम मुझसे नाराज़ भी हो गये कि मैं तुम्हारी कल्पनाके अनुरूप अपनेको उतार न सकी ।

विवेक : हाँ, इस संकटकी सचमुच यदि कोई शिक्षा है तो यही कि हमें अब वास्तविक अर्थोंमें मनुष्य बनना ही होगा।

रोज़ : [आश्चर्यसे] माने ?

विवेक : माने यह कि हमारा जीवन आज दिखावे और प्रदर्शन-का एक निरर्थक अम्बार बनकर रह गया है। हमें बड़ेसे बड़े दुःखको, बड़ीसे बड़ी ख़ुशीको सहज रूपमें सहना होगा। मैं यह नहीं कहता कि क्यूला झूठी आशाके सपने न देखे, या रोज़ अपने पिताकी मृत्युपर फूट-फूटकर न रोये। मैं यह भी नहीं चाहता कि सभी निष्क्रिय और तटस्थ होकर मशीनों-सा व्यवहार करें। मैं केवल इतना चाहता हूँ रोज़, कि अब हम हँसें भी तो उसका मतलब समझकर ही हँसें और रोयें तो भी उसका मतलब समझ-कर ही रोयें।

रोज़ : रोना-हसना तो अपने वशकी बात नहीं विवेक !

विवेक : तुम यह न सोचो रोज़ कि मैं इतना पत्थर हूँ कि दर्दसे टूटती आत्माकी रुलाईका उपहास करूँ। हमें अब सब कुछ उस तरह करना पड़ेगा जैसे एक जीवित और संघर्ष-रत राष्ट्रके निवासी करते हैं। जिनके दिलोंमें जलते दीये-को बड़ीसे बड़ी आँधी भी बुझा नहीं पाती। जिनके विश्वासको बड़ासे बड़ा भूकम्प भी हिला नहीं पाता। अब उस तरहके ढीले-ढाले दिखावटी आचार-व्यवहारका समय नहीं है। हमारी पसीनेसे लथ-पथ आत्मा उस व्यर्थके बोझको ढो भी न सकेगी। हमारे शरीर, मन, बुद्धि अब उस धातुके होने चाहिए, जिसपर तेज़से तेज़ आँच कोई असर न कर सके। तीखीसे तीखी गरमीमें

भी कभी चिटक न सकें। [एक क्षण रुककर] अरे—यह कौन ? कैप्टेन हैं क्या ?

रोज़ : [प्रसन्नताके साथ] हाँ, वे ही तो लगते हैं !

[विवेक जाने क्यों रोज़के चेहरेके भावोंको पढ़ लेना चाहता है]।

विवेक : बड़ी ख़ुशी हुई तुम्हें कैप्टेनके आनेसे !

रोज़ : क्यों ? इसमें ख़ुशी होनेकी बात नहीं है क्या ?

[कैप्टेन आता है। साथमें दो सैनिक और हैं। कैप्टेन आगे बढ़ आता है।]

विवेक : हेलो कैप्टेन ! [सैनिक पीछे मुड़कर खड़े हो जाते हैं।]

कैप्टेन : गुड इविनिङ् मिस्टर विवेक ! हेलो, मिस ओ' ब्राएन !

रोज़ : गुड इविनिङ् कैप्टेन !

विवेक : आप कुछ चिन्तित लगते हैं कैप्टेन !

कैप्टेन : नहीं तो, मैं अभी-अभी तेजपुरसे चला आ रहा हूँ। कुछ थका ज़रूर हूँ। हाँ, यहाँ आनेपर अभी-अभी आप लोगों-की बात चली, तो पता चला कि मिस ओ'ब्राएनके पिताजी नहीं रहे [कैप उतारता है; रोज़की ओर सहानु-भूति-भरी आँखोंसे देखते हुए] सो सैड मिस रोज़। आ'ऐम डीपली ग्रीव्ड। [मिस रोज़की आँखें डबडबा आती हैं] धीरज रखिए मिस रोज़ ! धीरज रखिए। यह वक़्त ही ऐसा है कि हर चीज़ आदमीकी पकड़से छूट जाती है। आपको रोना नहीं चाहिए।

रोज़ : [आँसू पोंछकर मुसकरानेका प्रयत्न करती है] मैं कहाँ रो रही हूँ कैप्टेन ! मैं अब नहीं रोती सच। मैं अब बिलकुल नहीं रोऊँगी [ज़ोरसे रो पड़ती है।]

विवेक : रोज़ !

रोज़ : [जल्दी-जल्दी आँसू पोंछ लेती है] मैं नहीं रोती विवेक ! अब नहीं रोऊँगी कैप्टेन ! आप क्षमा करेंगे ।

विवेक : बैठिए न कैप्टेन, थोड़ा सुस्ता लीजिए । तेजपुरके क्या समाचार हैं ?

कैप्टेन : सुस्तानेका तो मौक़ा नहीं है मिस्टर विवेक, मगर आपकी बात रखनेके लिए दो मिनिट बैठना ही पड़ेगा । तेजपुर-की हालत वैसी ही है भाई । पहलेसे कुछ बिगड़ी ही समझिए । आज तो बड़ी घबराहट है । वहाँ हमारे देशके लोग भी कभी-कभी कैसा बचपना करने लगते हैं । हमें तो [रोज़की ओर देखते हुए] मिस रोज़ ! आपके पापा-जी-जैसे आदमी चाहिए । जो अपनी धरतीको जानसे भी ज़्यादा मान-सम्मान दें [एक क्षण रुककर जैसे सोचता है] पर मैं बेचारी जनताको भी दोष क्यों दूँ । तरह-तरह-के लोग होते हैं । कुछ लोगोंको तो अफ़वाहें फैलानेमें ही आनन्द आता है । किसीने उड़ा दिया कि चीनी सैनिक तेजपुर पहुँच गये । बस बहुतोंके हाथ-पैर फूल गये, धड़ाधड़ दूकानें बन्द । बाज़ार सुनसान । ख़ैर, यहाँ-तक तो ग़नीमत थी; बहुत-से अधिकारी भी भाग खड़े हुए । टेलीफ़ोन, तार, पानी, बिजलीकी आवश्यक सेवाएँ तक ठप्प हो गयीं ।

रोज़ : यह तो अजब हालत है, फिर क्या हुआ !

कैप्टेन : होता क्या, सरकारने पहलेवाले कमिश्नरको मुअत्तल किया । नया अफ़सर आया । उसने आते ही सारी चीज़ें ख़ुद मौक़ेपर जा-जाकर सँभालना शुरू कीं । मैंने बहुत-से

अफ़सर देखे हैं, मगर ऐसा नहीं। उसका शरीर तो जैसे एक चलती-फिरती मशीन है। चौबीस घण्टेके अन्दर उसने समूचे शहरको 'नार्मल' कर दिया।

विवेक : श्री चेयर्स फॉर दैट मैन। कैप्टेन! असली हिन्दुस्तान यहाँ है! मैं अभी-अभी रोज़से यही बात कह रहा था। हम लोगोंको अपना पुराना रवैया बदलना ही होगा। ड्रैगॅनसे डरना या डरकर भागना ठीक नहीं है। हमें तो उसके आमने-सामने खड़े होकर उसके हर वारको झेलना है। भागकर बच भी सकते हैं क्या? भूतोंसे घिरे मकानके निवासी उतना नहीं डरते जितना भूतोंका नाम सुनकर भाग खड़े होनेवाले। हमें तो इस ड्रैगॅनकी हर साँसको उसके जबड़ोंके नीचे रहकर धैर्यके साथ सहना होगा, ताकि हमारा शरीर ऐसा हो जाये कि कभी उसके विषका हमारे ऊपर प्रभाव ही न पड़े। और जब हम ऐसे हो जायेंगे, तो एक-न-एक दिन इसके विषके दाँत भी तोड़ ही देंगे, क्यों कैप्टेन!

कैप्टेन : बिलकुल और तब वह ड्रैगॅन छिपकलीकी तरह इधर-उधर नाचेगा और हम तालियाँ पीट-पीटकर तमाशा देखेंगे। [सभी हँसते हैं। सहसा कैप्टेन विवेककी ओर मुड़कर] मिस्टर विवेक, आप अभी दोपहरको किधर गये थे?

विवेक : क्यों, मेरे ऊपर भी दृष्टि है क्या?

कैप्टेन : [हँसता है] अरे नहीं भाई, एक औरत बता रही थी कि आप छिपकर बस्तीके पास तक गये थे। बहुत देर तक उधर रहे भी।

रोज़ : [विवेककी ओर घूमकर तनिक क्रोधसे] तुमने मुझसे कुछ नहीं कहा इस बारेमें ? तुम भी ख़ूब हो। दूसरोंको तो जोखिमसे बचाते हो, लम्बे-लम्बे उपदेश देते हो, अपने उसीमें कूदते हो !

[रोज़की इस फटकारमें भी ममताका पुट है, जिससे विवेक घबरा जाता है कि कहीं कैप्टेन कुछ और न समझ ले। इसलिए वह चंचल होकर कैप्टेनके चेहरेपर देखता, उसके भावोंको पढ़नेका प्रयत्न करता है। किन्तु कैप्टेनके चेहरेपर कोई परिवर्तन न देख वह सिर नीचा करके चुप मुसकराकर रह जाता है।]

कैप्टेन : [हँसता हुआ] पत्रकार हैं न मिस रोज़। इन लोगोंको समाचार चाहिए। घबरा देनेवाले समाचार ! क्यों साहब ! कुछ मिलीं ख़बरें, जो अख़बारोंकी 'हेड लाइन्स' बनकर चीख़ सकें। समूचे देशमें हौलदिली पैदा कर दें। पत्रकार युद्धके मोर्चेपर, ख़बरें जो तोपोंने उगलीं, लपटें जो शत्रुओंकी साँसोंसे जलीं आदि, आदि। [तालियाँ पीटकर हँसता है]

विवेक : नहीं कैप्टेन, मेरी ख़बरें बिलकुल उलटी हैं। उनकी 'हेडिङ्'से देशमें घबराहट नहीं, विश्वास और दृढ़ताका भाव जगेगा। ये सच्ची ख़बरें हिन्दुस्तानके वीर सिपाहियोंके ख़ूनोंमें लिखी हैं, जिनसे हमारे पाँव काँपेंगे नहीं, मुट्ठियाँ अवश्य भिंच जायेंगी।

कैप्टेन : तो एकाध हमें भी सुनाइए न।

रोज़ : हाँ, विवेक !

विवेक : मैं अपनी डॉयरी नहीं पढ़ने जा रहा आपके सामने।

जाने क्या-क्या देखा, क्या-क्या लिखा। एक घटना अवश्य ही बहुत हृदयविदारक थी।

कैप्टेन-रोज़ : [दोनों साथ ही] कौन-सी घटना ?

विवेक : आप लोगोंने अख़बारोंमें यह ख़बर तो पढ़ी ही होगी कि एक स्थानपर चीनियोंने बौद्ध मोनपा लामाओंकी पोशाक पहन धोखेसे हमारे सैनिकोंपर हमला किया ?

कैप्टेन : हाँ, हाँ मैंने भी यह समाचार देखा था। [ललाटपर तर्जनी-से दबाकर कुछ सोचता है] याद नहीं आता कि कौन-सा पेपर था, शायद पत्रिकामें, ख़ैर। ये चीनी भी अजीब बहुरूपिये हैं। बौद्ध लामाओंकी पोशाक पहनकर पास आये और तुरत अपने पीले····क्या कहते हैं उसे ? गाउन···?

विवेक : चीवर····?

कैप्टेन : अच्छा, तो अपने चीवरके अन्दरसे ऑटोमैटिक राइफ़ल्स निकालकर उन्होंने गोलियाँ दाग़ना शुरू कर दीं।

विवेक : लेकिन कैप्टेन वह ख़बर अधूरी है। सत्य तो यह है कि उन नक़ली लामाओंमें कई सचमुचके लामा थे। तवाङ् विहारपर अधिकार करनेके बाद चीनियोंने इन लामा लोगोंको यह नाटक रचनेके लिए विवश किया।

कैप्टेन : [आश्चर्यसे] अच्छा ?

विवेक : हाँ, उनमें-से भागकर आये एक लामा भिक्षुसे मैं अभी-अभी मिलकर आ रहा हूँ। कह रहा था कि हममें-से कुछको संगीनकी नोकपर यह नाटक खेलनेको कहा गया। उनमें-से कुछसे यह कहा गया कि तुम लोग अपने

धार्मिक भजन गाते, पीतलके घण्टे बजाते आगे-आगे चलो ! बाक़ीकी पोशाकें उतरवाकर चीनी सैनिकोंने स्वयं पहन लीं ।

कैप्टेन : छिः छिः कितने नीच हैं ये लोग !

विवेक : ख़बर ख़त्म नहीं हुई कैप्टेन ! एक सैनिक अधिकारी मुझसे कह रहा था कि एक भिक्षु बहुत घायल होकर भी जीवित था । हमने उसे उठा लिया । पानीसे उसकी आँखें और मुँह धोया । बड़ी देरके बाद वह बोलने लायक़ हुआ । कुछ भी पूछनेपर हाथ जोड़कर वह आसमानकी ओर ताकता था और बार-बार अपना कान पकड़-पकड़कर रोता था । उसकी आत्मामें पश्चात्ताप, ग्लानि और क्रोध-के लाखों-लाख भाव एक साथ घुमड़ रहे थे । थोड़ी देर बाद ही उसकी मृत्यु हो गयी ।

रोज़ : इस नीचता और धोखेबाज़ीकी भी हद है ।

विवेक : किन्तु मैं तो कुछ और ही सोच रहा हूँ रोज़ । मैं तो उस बौद्ध भिक्षुकी तड़पती आत्माकी पीड़ाको सोच रहा हूँ । करुणा और अहिंसाके व्रती उस भिक्षुकी मानसिक पीड़ाको सोचो । उसकी तड़प, उसकी अपमानजनक विवशता; जैसे चीख़कर पूछ रही होंगी; यह नारकीय जीवन उसके किन पापोंका फल है ? क्या बिगाड़ा था उसने किसीका ? युद्धका यह जघन्य रूप उसके ऊपर क्यों लादा गया ? युद्धमें एक विवश निरपराध व्यक्तिको मृत्यु वह भी मर लेता, जैसा अनेक करेंगे; किन्तु एक कृतघ्न, धर्मद्रोही, देशद्रोही व्यक्तिकी मृत्यु स्वीकार करनेमें उसे कितना दुःख हुआ होगा !

कैप्टेन : [उठते हुए] ये चीनी लोग जो न करें। एक सभ्य ऊँची जातिसे युद्ध करना आसान होता है। उसमें हारनेपर भी विश्वास रहता है कि हमारे बन्दी सैनिकों और घायलोंके साथ मनुष्यताका बरताव होगा। लड़ाईमें छल-कपट तो और लोग भी करते हैं मगर ऐसा छल, ऐसा कपट शायद ही कहीं दिखे, जिसमें मनुष्यताके सभी क़ायदे-क़ानून बूटोंसे रौंद दिये जायें। मनुष्यताका गला घोंट दिया जाये।

विवेक : इसीसे कहता हूँ कैप्टेन, [बहुत गम्भीर और उदास होकर एक क्षण चुप रहता है जैसे सुदूर भविष्यको निकट खींच-कर उसे पूरी तरह समझ लेना चाहता हो] ऐसी लड़ाई हमारे इतिहासमें पहले-पहल आयी है। यह हमारी सैनिक-शक्तिकी परीक्षाकी नहीं, आत्मिक शक्तिकी भी परीक्षाकी घड़ी है। हम आर्थिक दृष्टिसे पिछड़े हैं, ग़रीब हैं। हमारे देशमें शिक्षाका प्रचार-प्रसार भी उतना नहीं। मगर अपनेको आध्यात्मिक दृष्टिसे हम बहुत सम्पन्न जानते-मानते रहे हैं। क्या नेता, क्या जनता, सभी दावा करते रहे हैं, हमारी संस्कृति महान् है, सभ्यता महान् है। हमारी दृष्टि सांसारिक उन्नतिको ही सब कुछ नहीं सम-झती। हम तथागत बुद्ध, अशोक और गान्धीके देशके निवासी आज संयोगसे ऐसे शत्रुके सामने खड़े हैं जहाँ हमारी आत्मशक्तिकी पूरी जाँच हो जायेगी।

कैप्टेन : [कैप्टेन अचानक थोड़ा निःस्पृह-जैसा हो जाता है या उसे कोई बहुत पेचीदा काम याद आ जाता है] इसमें कोई सन्देह नहीं मिस्टर विवेक! कि यह युद्ध हमारे भीतर

बहुत कुछ बनायेगा-मिटायेगा, अच्छा भई, मुझे तो आज्ञा दें अब आप लोग····।

विवेक : आप जायेंगे, बहुत जल्दी है क्या ?

कैप्टेन : हाँ, मैं कुछ जल्दीमें हूँ। कुछ ऐसा कार्य ही है कि देर करना ठीक न होगा।

[कैप्टेन चलने-चलनेको होता है कि एक सैनिक भागता-हाँफता पास आकर खड़ा हो जाता है और अटेन्शनकी हालतमें सैल्यूट मारता है] कहो रामसिंह क्या बात है ?

रामसिंह : [सबके सामने कहनेमें झिझकता-सा] हुज़ूर···वो !

कैप्टेन : हाँ, हाँ कहो-कहो, कोई हर्ज़ नहीं है, कह डालो।

रामसिंह : हुज़ूर ! अभी-अभी बख़्तावर आया था, कहता था कि वह आदमी पकड़ लिया गया है।

कैप्टेन : हूँ ऽऽ····[भौंहोंमें बल आ जाता है। फिर तुरत ही जैसे शान्त होकर] वेरी गुड। कहाँ है वह ?

रामसिंह : जी उसे वहाँ जीपके पास घेरे हुए हैं।

कैप्टेन : अच्छा; ले आओ यहीं ! ज़रा सावधानीसे। बहुत चालबाज़ आदमी है वह।

रामसिंह : जी हुज़ूर [सैल्यूट दे एबाउट्टर्न होनेको होता है कि]

कैप्टेन : और हाँ, रामसिंह ! [रामसिंह घूमकर अभिमुख होता है] घेरा शिथिल न हो। काम जारी रहे।

रामसिंह : यस सर ! [चला जाता है]

कैप्टेन : अच्छा मिस्टर विवेक ! [रहस्यमयी हँसीके साथ] आपको अपने देशके एक क्रान्तिकारीसे मिलाऊँ। [फिर कुछ सोचते हुए] ऐक्स्क्यूज़ मी मिस्टर विवेक, आप

इसे अपनी डायरीमें समाचार समझकर नोट मत कर लीजिएगा [हँसता है ।]

विवेक : थैंक् यू कैप्टेन ! [प्रसन्न होकर शीघ्रतासे उठता है कि कहीं कैप्टेन बीचमें ही अपना 'ऑफ़र' वापस न ले ले] समाचार अगर वाक़ई इस लायक़ हुआ तो नोट करना ही पड़ेगा ! अपना तो काम ही यही है ।

कैप्टेन : दैट्' स राइट, मगर आप तो अपना कर्तव्य निभायेंगे और उधर वे शैतान सावधान होकर कहीं छिप-छिपा जायेंगे । क्षमा कीजिएगा मिस्टर विवेक, यह 'कन्फ़िडेन्शल' मामला है ।

[विवेक कैप्टेनके साथ आगे बढ़नेको होता ही है कि उसकी दृष्टि अचानक रोज़के चेहरेपर पड़ती है । वह उसकी आँखोंसे बचनेके लिए अपना मुँह फेर लेती है । अन्यमनस्क भावसे कहीं और देखती होती है । विवेक एक क्षण उधर-को देखता है, दूसरे क्षण कैप्टेनकी प्रतीक्षा करता है कि वह इधर देखे तो बातें स्पष्ट हो जायें । इसी उधेड़-बुनमें उसके पाँव बँधने-बँधनेको होते हैं कि उसे थथमते देख कैप्टेन मुड़कर कारण पूछना चाहता है ।]

विवेक : क्यों कैप्टेन ! [हक़लाते हुए] मैं····ऐं····कैप्टेन ! हम दोनों ही चलें न ?

कैप्टेन : ओह [कैप्टेन विवेकको असमंजसताका रहस्य समझ लेता है । वह रोज़की ओर देखता है जो इस प्रसंगमें अपनी कोई दिलचस्पी नहीं है यह प्रकट करनेके लिए वैसे ही किसी अदृश्य बिन्दुपर अब भी ताकती होती है] आइ सी [कैप्टेन रोज़के पास पहुँचता है] आ' ऐम वेरी सॉरी

मिस ओ' ब्राएन । प्लीज़ कम एलाङ् । मैं आप दोनोंको ही कह रहा था ।

रोज़ : कोई ऐसी बात हो कैप्टेन तो रहने दीजिए, लेट् मी रिमेन हीयर ।

कैप्टेन : नो-नो मिस ओ' ब्राएन, आप भी आइए ।

रोज़ : [किंचित् क्रोध और व्यंग्य-मिश्रित भावसे] शायद अब भी मैं सस्पेक्ट ही होऊँ ।

कैप्टेन : [अनुनयसे] डोण्ट फील ऑफेण्डेड प्लीज़ ! हमारा कुछ काम ही ऐसा है मिस रोज़ । तेजपुरसे चलीं तो ज़रूर कुछ शंका उपजी आपको लेकर····किन्तु अब तो बिलकुल ही नहीं है ।

[तभी रामसिंह और उसका दूसरा साथी एक व्यक्तिको लाते हैं, वह बीस-पचीसका युवक है ! बाल छोटे, कड़े, चेहरा पीला, बहुत पतला-पतला, दुबला । मूँछें छोटी-छोटी पर बहुत काली । उसके चेहरेपर एक अजीब तरहका विश्वास है । जैसे उसे अपने कार्यकी महत्ताका पूरा बोध हो । देखनेसे यह भी लगता है कि कोई सोचने-विचारनेवाला इण्टलैक्चुअल आदमी है । फटा-फटा-सा पायजामा और कोट पहने है । एक सैनिक उसके पीछे राइफ़ल ताने हुए चलता है ।]

कैप्टेन : [आगन्तुकके चेहरेपर अन्तर्वेधी दृष्टिसे देखते हुए] हेलो, मुकुल !

मुकुल : [धीरे-धीरे रुककर विश्वासपूर्वक] मेरा नाम मुकुल नहीं, मनोज है ।

कैप्टेन : [व्यंग्यसे] जी नहीं मनोज भी नहीं मुरारी। [हँसते हुए] कभी तुम मुकुल हो, कभी मनोज, कभी मुरारी ! कभी सैनिकोंको सामान सप्लाई करनेवाले कॅन्ट्रैक्टरके क्लॅर्क तो कभी-कभी सर्वसेवा संघके कार्यकर्ता। कभी पत्रकार, कभी आदिवासियोंकी भाषापर शोध करनेवाले रिसर्च स्कॉलर ! और इधर तुम नेफाके 'कॅस्ट्यूम्स' पर थीसिस लिख रहे हो ? हो ना ?

मुकुल : [हलकेसे मुसकराता है] ऐवसर्ड।

कैप्टेन : [तमककर] मैंने जो कहा वह ग़लत है ?

मुकुल : [अकड़कर] निश्चय।

कैप्टेन : क्या तुम कुछ दिनों पहले अपने रिसर्चके सम्बन्धमें बोमदि लाके म्यूज़ियममें नहीं गये थे ?

मुकुल : गया था, अवश्य गया था।

कैप्टेन : फिर कैसे कहा एवसर्ड ?

मुकुल : उसके साथ-साथ जो आपने कहा वह बिलकुल एवसर्ड नहीं तो और क्या है ?

कैप्टेन : तुम पूरे मक्कार हो !

मुकुल : [तमतमाकर] आपको मेरा अपमान करनेका कोई अधिकार नहीं।

कैप्टेन : मिस्टर मुकुल ! अब नाटक करना छोड़िए और साफ़-साफ़ सभी बातें उगल दीजिए [पॉकेटसे एक नोटबुक और उसके भीतरसे एक फ़ोटोग्राफ़ निकालता है] कलकत्ताकी पुलिसने आपकी यह जन्म-कुण्डली भेजी है। ज़रा इसे ध्यानसे देखिए [स्वयं भी देखता है] ओफ़्फ़ो

[आश्चर्यसे] इस फ़ोटोमें आपकी मूँछें एकदम साफ़ हैं ? [मुकुलके चेहरेपर ध्यानसे देखते हुए] हूँ तो आपने ये नक़ली मूँछें कबसे लगाना शुरू कर दीं ? [कैप्टेन उसकी मूँछोंकी ओर हाथ बढ़ाता है]

मुकुल : [गुस्सेसे चेहरा विकृत करते हुए] बदतमीज़ !

कैप्टेन : रामसिंह ? [आँखोंका इशारा करता है। रामसिंह अपने एक हाथसे मुकुलका जबड़ा पकड़ता है, मुकुल निरन्तर गाली बकता है और अपने मुँहको इधर-उधर हिलाता उसके काममें बाधा डालना चाहता है। तभी दूसरे हाथसे रामसिंह उसकी मूँछें खींच लेता है। मूँछें एकदम बाहर आ जाती हैं।

रामसिंह उसे छोड़कर मूँछें कैप्टेनकी तरफ़ बढ़ा देता है। राइफ़लवाला सैनिक पूरा सजग होकर मुकुलके पीछे खड़ा हो जाता है और राइफ़लकी नली उसके पीठमें छुआ देता है।]

कैप्टेन : [मूँछोंको इधर-उधर घुमाकर देखता है] क्यों अब भी नाटक करते रहोगे ?

मुकुल : [पूर्ण शान्तिसे, जैसे कुछ हुआ ही नहीं] मुझे ये मूँछें बोमदि लाके म्यूज़ियममें मिल गयीं। कामेंङ् डिवीज़नके आदिवासियोंकी रहन-सहनका परिचय देनेवाली मूर्तियोंमें एकको ये मूँछें लगी थीं। दो दिन पहले मैं वहाँ गया था। ये मूँछें मुझे बहुत अच्छी लगीं और मैंने इन्हें उपार-कर अपनी मूँछोंपर लगा लीं। बेशक यह मेरी [illegible]ती थी, पर आप यह मत समझिए कि मैं चोर हूँ।

कैप्टेन : [कृत्रिम सहानुभूति दिखाते हुए] नहीं जी, आप चोर

नहीं हैं। ऐसा तो कोई बेवकूफ़ ही समझेगा। लेकिन यह तो बताइए कि बेजान मूर्तियोंकी मूँछें लगा-लगाकर आप अपनी मूँछें कबतक बचाते रहिएगा? देशकी मूँछों-की तो परवाह आपको होनेसे रही? आप चोर नहीं मिस्टर मुकुल परले नम्बरके देशद्रोही और ग़द्दार हैं।

मुकुल : कैप्टेन मोहन, ज़बान सँभालकर बातें करो।

कैप्टेन : क्या नाम बताया आपने मेरा?

मुकुल : मोहनसिंह। कैप्टेन मोहनसिंह। कह दीजिए आप यह भी झूठ है? [आँखें यों नचाता है, जैसे कोई बहुत बड़ा काम कर चुका हो।]

कैप्टेन : [गम्भीर होकर] नहीं मुकुल यह झूठ नहीं है। किन्तु मुझे याद नहीं आता कि हमने कभी एक दूसरेका नाम पूछा था?

मुकुल : न पूछा तो क्या? क्या मैं आपका नाम नहीं जानता?

कैप्टेन : [तनकर] तुम सिर्फ़ मेरा नाम ही नहीं जानते मुकुल, तुमने हमारे आफ़िसमें बम रखवाया था। तुम तेजपुरकी पानी टंकीमें विष डालना चाहते थे। तुम मिलेट्रीके हर 'मूवमेण्ट' का विवरण एकत्र करते थे। तुमने लोगोंमें परचे बाँटे। तुम यहाँ ढेर-सी चिटें लेकर आये थे और आदिवासियोंमें उन्हें बाँट-बाँटकर कहते थे कि घर-बार छोड़कर भागनेकी ज़रूरत नहीं। चीनी सैनिक आक्रमण करने नहीं, तुम लोगोंको मुक्त करने आ रहे हैं। घबराओ मत, ये चिटें दिखानेसे वे तुम्हारे साथ अच्छा बरताव करेंगे। तुम्हें मुफ़्त गल्ला और कपड़ा देंगे।

मुकुल : यह झूठ है।

कैप्टेन : रामसिंह ! उस औरतको बुलाओ। [रामसिंह चला जाता है। कैप्टेन मुकुलकी आँखोंमें देखते हुए] तो यह झूठ है ? यह झूठ है कि तुमने इस एरियामें देशद्रोहियोंका बहुत बड़ा गैंग तैयार कर रखा है ? यह झूठ है कि तुम्हें चिटें-परचे आदि सामान कलकत्तेसे सप्लाई होता था ? यह झूठ है कि तुम्हारे आदमियोंने चीनियोंको से लाके पासका गुप्त मार्ग बताया ?

मुकुल : [चीखकर] हाँ, हाँ, यह सब झूठ है। कैप्टेन तुम मुझे झूठे अपराधोंके जालमें कभी नहीं फाँस सकते। [हँसता है] यह सब बन्दर-भभकी किसी औरको दिखाना।

[रामसिंह क्यूलाके साथ आता है।]

क्यूला : हा, हा, हा, हा, [पागलकी तरह हँसती, और वहाँ खड़े हर व्यक्तिको बारी-बारीसे उचटती नज़र देखती, सहसा मुकुलके सामने खड़ी हो जाती है] सरकार यही था वो आदमी ! बिलकुल यही था ! [उसके चेहरेको घूर-घूर-कर देखती हुई] हाँ यही तो था ! मगर ? [गालमें उँगली गड़ाकर सोचती है] मगर····

कैप्टेन : क्या मगर ! मगर क्या ?

क्यूला : [अपने दोनों हाथोंकी तर्जनी और अँगूठेको मिलाकर अपने मुँहके पास इस तरह रगड़ती है जैसे तागा बट रही हो।] उसके तो मूँछें थीं !

कैप्टेन : [ज़ोरसे हँसते हुए] रामसिंह ! मुकुलकी मूँछें लगा दो। [रामसिंह बड़ी कठिनाईसे मुकुलके झटकते सिरको पकड़-कर मूँछें लगाता है।]

क्यूला : अरे, बस-बस, यही था सरकार, यही था।

मुकुल : यह झूठ बोलती है।

क्यूला : [उसके पास जा क्रोधसे यों हाथ हिलाती है, जैसे उसके चेहरेसे गोश्त नोच रही हो] क्यों रे मैं झूठी हूँ? मैं झूठी हूँ? तूने मेरेको यह चिट नहीं दी? [ब्लाउज़के अन्दर-से एक चिट निकालकर दिखाती है] तूने यह नहीं कहा कि चीनी बड़े अच्छे होते हैं? [थूकती है] तुम्हें अनाज देंगे, कपड़े देंगे। तुम लोग अपना घर-बार छोड़कर मत जाओ। तूने नहीं कहा यह सब! बोल!

मुकुल : तुम झूठी हो। मूर्ख हो।

क्यूला : क्यों रे तूने यह नहीं कहा कि टूराँ बड़े मज़ेमें है। चीनी उसके साथ बहुत अच्छा बरताव करते हैं? ऐं, बोल, बोल न?

कैप्टेन : कौन टूराँ?

क्यूला : [आश्चर्यसे] वाह सरकार! आप टूराँका नाम नहीं जानते? मेरा घरवाला सरकार। बहुत बहादुर है। देश-के लिए जान हथेलीपर लेकर लड़नेवाला नौजवान है बाबू! इसके चीनियोंने उसको पकड़ लिया है शाइत। मगर वह आयेगा। ज़रूर आयेगा। टूराँको कोई रोक नहीं सकता। [विवेककी ओर देखती हुई] क्यों बाबू आयेगा न? तुम तो कहते थे कि ज़रूर आयेगा?

विवेक : हाँ, हाँ क्यूला; तेरा टूराँ ज़रूर आयेगा?

क्यूला : [चिल्लाती हुई भागती है] हाँ, हाँ, वह ज़रूर आयेगा, वह ज़रूर आयेगा।

कैप्टेन : अजीब औरत है! [मुकुलकी ओर घूमकर] क्यों मुकुल

अब भी तुम इनकार करोगे कि तुमने चिटें नहीं बाँटी ? तुमने जनताको गुमराह नहीं किया ?

मुकुल : मैंने किसीको गुमराह नहीं किया। मैंने जो कुछ भी किया, वह सत्यके लिए किया।

कैप्टेन : [घृणासे मुँह विकृत-सा करते हुए] और वह सत्य है क्रान्ति ! हर ग़द्दार देशद्रोही अपनेको क्रान्तिकारी कहने लगता है।

मुकुल : [उसी विश्वासके साथ, निर्भीकतापूर्वक] असफल क्रान्ति देशद्रोह बन जाती है कैप्टेन ! वही सफल होनेपर क्रान्ति कही जाती है।

विवेक : [मुकुलके चेहरेपर इस तरह देखता है जैसे उसे विश्वास ही नहीं हो रहा हो कि कोई भारतीय भी ऐसा सोच सकता है] आख़िर आप यह क्रान्ति करना क्यों चाहते हैं ?

मुकुल : जनताके लिए।

विवेक : तो इसमें बाधक कौन है ? क्या सचमुच जनताके कल्याण-के लिए आप यह सब कर रहे हैं ?

मुकुल : निश्चय। जबतक इस देशसे पूँजीवादी शासन समाप्त नहीं होगा, जनताको सुख-चैन नहीं मिलेगा।

विवेक : ठीक है। यदि ऐसी बात है और यदि आप समझते हैं कि यह सरकार पूँजीवादी है, इससे जनताका कल्याण नहीं हो सकता तो आप इसे बदलनेके लिए प्रयत्न कीजिए। आप जनताके सामने अपने विचार रखिए, जनता यदि उसे स्वीकार करेगी तो यह सरकार अपने आप बदल जायेगी।

मुकुल : जनता कुछ नहीं समझती। जनता हमेशा मूर्ख होती है। उसे समझाना पड़ता है।

विवेक : जनता मूर्ख होती है? [घृणासे] क्योंकि वह आपकी तरह लुटेरे और डाकुओंके तलवे नहीं चाटती। देशके साथ विश्वासघात नहीं करती। आपकी तरह बुद्धि बेचकर किसी आदमख़ोर पिशाचके संकेतपर कठपुतलीकी तरह नाचना नहीं चाहती!

मुकुल : कृपा करके आप अपनी बकवास बन्द कीजिए। ठीकसे बोलना न आता हो तो चुप रहिए।

विवेक : मैं चुप हो जाऊँगा मिस्टर, मगर एक बात गाँठमें बाँध लो: यह कोरिया और वियतनाम नहीं है, हिन्दुस्तान है। चीनको भी मनुष्यता और सत्यका पाठ पढ़ानेवाला हिन्दुस्तान!

मुकुल : हुँह [व्यंग्यसे] सत्य और मनुष्यता। प्रत्येक प्रतिक्रियावादी इन्हीं बे-अर्थ शब्दोंकी आड़ लेता रहा है।

विवेक : [अपने-आप] ऐसी ही बात तो उसने भी कही थी। किसने? किसने? [विवेकको लगता है जैसे उसका सिर चक्कर खा रहा है वह ललाटके दोनों पुटकोंको मध्यमा और अँगूठेसे दबाकर सोचता-सा होता है] चीनी जादूगरने····हाँ, उसीने कहा था।

कैप्टेन : [घबराकर] क्या बात है मिस्टर विवेक! तबीयत तो ठीक है? [मुकुल हँसता है।]

विवेक : ऐं···जी [जैसे अचानक डूबे हुए तलसे छिटककर सतहपर आ गया है] जी, हाँ, बिलकुल ठीक है। अचानक सिरमें थोड़ा दर्द हो आया।

कैप्टेन : [मुकुलकी ओर मुख उठाकर जिरह करते हुए] तुम्हारे साथवाले दूसरे क्रान्तिकारी कहाँ हैं ? [मुकुल कुछ नहीं बोलता] से लाके पासका गुप्त मार्ग चीनियोंको तुमने बताया था या तुम्हारे किसी दूसरे साथीने ? [मुकुल फिर चुप] जो कुछ कहना हो साफ़-साफ़ कह दो ? सच्ची बात बता देनेसे तुम्हारा लाभ ही होगा मिस्टर मुकुल !

मुकुल : [धीमे किन्तु सचेष्ट गम्भीरताके साथ] मुझे कुछ नहीं मालूम ।

कैप्टेन : भ्रम छोड़ दो मुकुल ! इस बार तुममें-से कोई भी बचकर निकल न सकेगा । यह सारा एरिया मेरे आदमियोंने सील कर दिया है समझे ? अपनी कुशल चाहते हो तो अब भी बता दो—[उसके पास सटकर एक-एक शब्दपर पूरा ज़ोर देते हुए] से लाके पासका गुप्त मार्ग किसने बताया ?

मुकुल : [किंचित् क्रोधके साथ गरदन झटकते हुए] मैंने कहा न कि मुझे नहीं मालूम ।

कैप्टेन : रामसिंह ।

रामसिंह : यस सर ?

कैप्टेन : इन्हें पूरी सावधानीके साथ कैम्प तक ले चलो । यहाँ ये कुछ न बतायेंगे । वहाँ बड़ी आसानीसे उगल देंगे ।

[रामसिंह मुकुलका हाथ पकड़कर ज़ोरसे खींचता है । मुकुलके पीछेवाला सैनिक राइफ़ल लेकर पुनः उसके पीछे

खड़ा हो जाता है। रामसिंह उसे हाथके धक्केसे चलनेको प्रेरित करता है।]

रोज़ : [लम्बी साँस लेकर] माइ गॉड। कितने सिरफिरे होते हैं ये लोग ! कभी इनके मनमें यह आता ही न होगा कि ये ऐसा नीच और बुरा काम कर रहे हैं !

विवेक : इतना ही नहीं। अपने नीच और जघन्य कामोंको ऊँची-ऊँची चमकीली बातोंमें तोप-ढँक भी लेते हैं। इन्हें पूरा विश्वास है कि जो कुछ ये कर रहे हैं बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

रोज़ : [हलके हँसती हुई] और तुर्रा यह कि यह सब कुछ जनताके कल्याणके लिए किया जा रहा है।

कैप्टेन : यह इनका दोष नहीं है मिस ओ' ब्राएन। यह है इनका इन्ड्राक्ट्रिनॉइजेशन। इनके दिमाग़को इस तरह रँग दिया गया है कि ये अपनी बुद्धिसे सोच-समझकर ग़लत-सहीमें अन्तर कर ही नहीं सकते। और तमाशा यह कि सभी कुछ जनताके कल्याणके नामपर किया जाता है। आप सुनती नहीं पीकिङ् रेडियो भारतीय जनताके लिए बेचैन रहता है ?

विवेक : हमें तो कैप्टेन कभी-कभी बड़ी हँसी आती है। मान न सनमान मैं तेरा मेहमानवाली कहावत है।

कैप्टेन : [कुछ रुककर] ऐसी बात नहीं है भाई। चीनी शासक जानते हैं कि इस देशमें अब भी मुकुलकी तरह अनेक सिरफिरे मौजूद हैं। [कलाई घड़ीपर एक नज़र देखते हुए] अच्छा भाई विवेक, अब तो मैं चलूँगा। आप लोग कब लौट रहे हैं ?

विवेक : अब लौटेंगे ही कैप्टेन ?

कैप्टेन : अच्छा, फिर तो वहीं भेंट होगी। गुड बाइ मिस ओ'-ब्राएन ! गुड बाइ मिस्टर रॉय !

रोज़ : गुड बाइ कैप्टेन !

विवेक : थैंक्स कैप्टेन ! गुड बाइ।

[दोनों कुछ देर तक कैप्टेनको जाते हुए देखते रहते हैं।]

विवेक : [सहसा घूमकर रोज़को आमने-सामने देखते हुए] अब ?

रोज़ : तो कैप्टेन मिलिट्री इण्टेलिजेन्ससे सम्बन्धित हैं ?

विवेक : तुम नहीं जानती थीं क्या ?

रोज़ : तुमने भी तो नहीं बताया।

विवेक : [चिढ़ानेकी मुद्रामें हलके हँसते हुए] तो इसमें परेशान होनेकी क्या बात है। कहीं तुम तो किसी क्रान्तिकारी दलकी मेम्बर-वेम्बर नहीं हो न ? [हँसता है]

रोज़ : [भौंहे टेढ़ी करके, बनावटी क्रोधसे] फिर वही शरारत।

विवेक : ग़लती हुई रोज़। असलमें औरतका सम्बन्ध दलसे नहीं होता बल्कि····[रुकता है]

रोज़ : हाँ हाँ, बल्कि किससे ?

विवेक : पता नहीं। [विवेक झेंपते हुए ज़मीनपर-से अपना चेस्टर उठाता है। रोज उसकी तरफ़ देखती-हँसती शॉल ठीक करती है। हवा तेज हो जाती है। तभी उन दोनोंके ऊपर पड़नेवाली रोशनी काँपती है। दो आदमी परदेके

पीछेसे दौड़कर मंचपर आते हैं। आगेवाला आदमी बीस-पचीसका नवयुवक है। उसके कपड़े बोमदि लाके आदिवासियों-जैसे ही हैं। पीछेवाला आदमी शीकू है। वह झपटकर उसे पकड़ता है। दोनों गुँथ जाते हैं। शीकू अपनी कमरके फैंटेसे लम्बा-सा छुरा निकालता और उस आदमीकी छातीमें भोंक देता है। वह आदमी बुरी तरह चीख़ उठता है। चीख़की आवाज़ एक बार फिर उठती है और सुनसान जंगलको चीरती-काँपती दूर तक छा जाती है। प्रकाशका चक्र काँप-काँपकर उन दोनोंपर ठहर जाता है।]

विवेक : [अचानक बहुत उत्तेजित-सा होता] रोज़ वह देखो! वही गूँगा शीकू है! किसी आदमीको छुरा मार दिया उसने। [विवेक तेज़ीसे दौड़ता है। हड़बड़ाकर रोज़ भी लपकती है। विवेक शीकूको पीछेसे जाकर दबोच लेता है। शीकूके हाथमें ख़ूनमें रँगा हुआ छुरा है। विवेक उसका वही हाथ पकड़कर ऐंठता और उसे पीठपर चढ़ा देता है। छुरा नीचे गिर जाता है।]

विवेक : [दाँत पीसते हुए] मैं पहले ही जान गया था तू कोई बहुत बड़ा शैतान है। तू ज़रूर चीनी एजेण्ट है। इसमें कोई सन्देह नहीं।

[शीकू वैसे ही खड़ा रहता है। वह विवेकके हाथसे अपना हाथ छुड़ानेका कुछ प्रयत्न नहीं करता। वह चुपचाप सामने पड़े घायलपर आँखें गड़ाये ताकता रहता है। तभी परदेके पीछेसे कैप्टेन, रामसिंह तथा एक और राइफ़ल-धारी सैनिक दौड़े हुए मंचपर आते हैं। एक तरफ़से क्यूला बदहवास-सी चिल्लाती हुई आती है। शीकू उसे देखकर

गरदन झुका लेता है और यों हिलता-डुलता है जैसे कहीं छिपनेका ठौर खोज रहा हो। राइफ़ल लिये सैनिक उसके पीछे खड़ा हो जाता है। विवेक शोकूका हाथ छोड़कर परे हट जाता है।]

क्यूला : [पागलकी तरह इधर-उधर देखती-ढूँढ़ती-सी] कौन था वह ? कौन था वह ? किसकी चीख़ थी वह ?

[सामने घायल और दम तोड़ते हुए आदमीको वह देखती है, और कटे वृक्षकी तरह उसके बदनपर गिर पड़ती है।] टूराँ ! [सिसकती हुई, उसके बदनसे चिपक जाती है] टूराँ !! आह टूराँ !! मैं तेरी क्यूला हूँ टूराँ ! ज़रा मेरी ओर देख तो, तूने मुझे कुछ नहीं बताया टूराँ ! अपनी वीरताकी कहानियाँ फिर किसे सुनायेगा टूराँ ? जब तू, देशके लिए सिर हथेलीपर लेकर शत्रुओंसे लड़ रहा था न, तो मैं यहाँ तेरे नामकी माला जपा करती थी। जंगल-जंगल पागल होकर हेरती रहती थी। सच, पूछ न ले किसीसे। मैं हमेशा तेरी याद लिए दरवदर फिरती रही। मैंने तेरे बिना क्या-क्या नहीं सहा। सब लोग मुझे क़स्बा छोड़कर चले जानेको कहते थे, मैं नहीं गयी, मैं जानती थी तू एक-न-एक दिन आयेगा। [हिचककर रोती है] पर टूराँ तू इस तरह आयेगा, यह तो मैंने कभी नहीं सोचा था, हे भगवान् ! बोल-बोल टूराँ। [टूराँ एक क्षण स्थिर बुझती आँखों क्यूलाको देखता है। वह उठकर कुछ कहना चाहता है। सिर और धड़का ऊपरी भाग थोड़ा उठाता भी है। झलमलाते हुए कहता है, क्यू··· ला···।···। तभी जैसे कहींसे मौतकी लहर सड़ाक्से उसके

वदनको झनझनाती निकल जाती है···उसका उठा बदन शिथिल-सा होता है और गरदन झूल जाती है] टूराँ ! टूराँ !! [क्यूला फूट-फूटकर बिलख उठती है ! और क्षण-भर बाद ही गुस्सेमें तमतमायी फुफुकारती हुई उठती है ।] किसने मारा इसे ? किसने मारा ? कौन है वो ? जल्दी बताओ, मैं उसका ख़ून पी जाऊँगी । मैं उसे कच्चा चबा जाऊँगी । [दाँत किटकिटाती है । बग़लसे एक सैनिक मुकुलको राइफ़लकी नलीसे धक्का देते हुए मंचपर ले आकर खड़ा कर देता है ।]

तुम सब चुप क्यों हो ? बोलो, बोलो ? किसने मारा इसे ? [विवेकके पास जाकर खड़ी हो जाती है] बाबू ! तुम बताओ किसने मारा इसे ? बाबू यही टूराँ है, देशके लिए जान गँवा देनेवाला मेरा टूराँ !

विवेक : [एक क्षण क्यूलाके चेहरेपर देखता-सोचता होता है] क्यूला, इसने मारा टूराँको ! [शीकूकी ओर घृणासे संकेत करता है । क्यूला शीकूको देखकर आश्चर्यसे अवाक् हो जाती है । उसके चेहरेपर एक साथ ही दुःख, पीड़ा, अविश्वास, कुशंका आदिके अनेक भाव घने हो जाते हैं । उसके ललाटकी रेखाएँ एक अजीब खिंचावसे टपकती-सिमटती होती हैं । फिर एक अबूझ असमंजससे काँपती ध्वनिमें वह पूछती है :]

क्यूला : तुम ? बापू तुम ? तुमने मारा टूराँको ? तुमने मारा टूराँको ?

शीकू : [बिना झिझक, तटस्थ-जैसे भावमें] हाँ क्यूला, मैंने मारा टूराँको !

[रोज़, विवेक, कैप्टेन सभी विस्मित-से एक दूसरेका मुँह देखते होते हैं। जैसे उनके लिए यह विश्वास करना कठिन हो रहा है कि शीकू बोलता है !]

रोज़ : [अचानक] यह तो बोलता है ?

कैप्टेन : [रहस्य-चमत्कृत भावसे] अरे ! तो यह गूँगा नहीं था ? सिर्फ़ बना हुआ था।

विवेक : कोई-न-कोई राज़ है इसमें। यह तो पक्का बदमाश मालूम होता है।

कैप्टेन : [शीकूकी आँखोंमें आँखें डालकर, जैसे उसके हृदयका सारा रहस्य समझ-बूझ लेना चाहता हो] तो टूराँ तुम्हारा बेटा है ?

शीकू : [वैसे ही तटस्थ भावसे] है नहीं सरकार, था कभी। था हुज़ूर। टूराँ मेरा इकलौता बेटा था बाबू। मैं इसकी नींद सोता था, इसीकी नींद जागता था। इसकी माँ बचपनमें ही मर गयी थी और मैंने इन्हीं हाथोंसे [अपने खूनसने हाथोंको देखता है] इन्हीं हाथोंसे सरकार उसको खिलाया-पिलाया, पाला-पोसा। [थोड़ा रुककर जैसे सूखे गलेको गीला कर रहा हो] और जब टूराँ मेरा बेटा नहीं रहा बाबू, तो मैंने इन्हीं हाथोंसे उसे छुरा भी मार दिया। हाँ छुरा भी मारा ! [अचानक उसकी गरदन हिलती है जैसे अपने कियेका हामी भर रहा हो] और अब ? [वह लपककर टूराँकी लाशके पास बैठ जाता है। भोगे स्वरमें] अब सरकार जब टूराँ नहीं रहा तो लगता है कि यह लाश मेरे ही बेटेकी है। उसी बेटेकी बाबू जो मेरी बाँहोंमें झूले झूला करता था [सिसकता है।]

कैप्टेन : शीकू ! [वातावरणको मोहक उदासीको तोड़ते हुए-से भावमें] याद रखो कि तुम जो कुछ भी कह रहे हो, समझकर कह रहे हो। तुम्हारा बयान तुम्हारे ख़िलाफ़ भी इस्तेमाल हो सकता है।

शीकू : मैं जो भी कह रहा हूँ हुज़ूर, सब समझकर ही कह रहा हूँ। शीकूकी ज़िन्दगी ख़तम हो गयी बाबू, ख़तम हो गयी। अब उसके ख़िलाफ़ या बेख़िलाफ़का सवाल ही कहाँ है ?

कैप्टेन : ठीक है। रामसिंह ये सारी बातें रेकॅर्ड रहनी चाहिए। [रामसिंह जो पहलेसे ही शीकूका बयान नोट करनेके लिए पॉकेटसे नोट-बुक निकालता होता है, स्वीकृतिमें गरदन हिलाता है।] तो तुम दोनों बाप-बेटे थे ? कहाँ रहते थे ?

शीकू : हम दोनों बाप-बेटे सरकार, चायबगानमें नौकर थे। कितनी भरी-पूरी थी वह ज़िन्दगी ! छुट्टियोंपर हम घर आते। उसी साल हमने बोमदि लामें सरकार, अपने क़बीलेकी सबसे सुन्दर लड़कीसे टूराँकी शादी की। क्यूलाको आप देखते हैं सरकार ? बेचारी इसके ग़ममें ऐसी हो गयी है ! नहीं यूक्ला भी थी सरकार, जिसे देखनेको चायबगानके बड़े-बड़े अफ़सर तरस जाते थे। हाँ, मगर शीकूका यह छुरा [ज़मीनपर पड़े छुरेकी ओर संकेत करता है।] किसीको क्यूलाकी ओर कभी बदनीयत ताकने कब देता था हुज़ूर ? क्यूला रानीकी तरह पली है बाबू, रानीकी तरह ! सब कुछ था अपने पास ग़रीब-परवर। तभी हमारा परिचय एक अँगरेज़ बाबूसे हो गया। वह कलकत्तेके एक बंकमें ऊँचे ओहदेपर जाने

लगे। टूराँ ज़िद कर गया बाबू। साहबने उसे ऊँची नौकरीका भरोसा दिया था। ख़ूब भरा था उसका दिमाग़। सो हम बाप-बेटे दोनों कलकत्ते चले आये। वहींसे सरकार हमारी तावाहीकी कहानी शुरू होती है।

मुकुल : [सहसा अस्थिर हो जाता है] ए बुड्ढे! तूने अपने बेटेको छुरा मारा। अब बेवफ़ूफ़ीकी बातें करके अपने गलेमें फाँसीका फ़न्दा काहे डलवा रहा है ?

शीकू : [गरदन उठाकर मुकुलको देखता है। घृणासे उसकी आँखें खोलने लगती हैं। शरीर काँपता होता है। तभी अपनी पीठपर राइफ़लकी नलीको छुवनका अनुभव करता है और मुकुलको देखकर घृणासे थूकता है] तू चुप रह कमीनेकी औलाद, शैतानके बच्चे ! तुझे पकड़कर जब सिपाही लाये तभी मैंने अपना सिर पीट लिया। मैं चाहता था कि टूराँको मारकर मैं अपना बदला लूँगा और उसी छुरेसे तुझे मारकर टूराँका बदला लूँगा कमीने! मगर तू पहले ही सरकारकी गिरफ़्तमें आ गया और एक कुत्तेकी मौत मरनेसे बच गया !

[मुकुलका चेहरा उतर जाता है। खिसियानी हँसी हँसते हुए]

मुकुल : चुप रहो, बेवकूफ़, मूर्ख !

शीकू : [कैप्टेनसे अभिमुख होते] सरकार, यही है वह हरामी-की औलाद [मुकुलकी ओर उँगली उठाकर] जिसने मेरे हँसते-चहकते घोंसलेको तोड़कर वीरान कर दिया। टूराँकी यह हालत इसीने करवायी।

कैप्टेन : तुम साफ़-साफ़ कहो शीकू। इससे टूराँसे क्या सम्बन्ध था ?

शीकू : वही सब तो बताना चाहता हूँ सरकार [धसककर ज़मीनपर बैठनेको होता है] एक छन रुको बाबू, सब बताता हूँ। इन पैरोंसे अब खड़ा नहीं हुआ जाता ग़रीब-परवर।

कैप्टेन : कोई बात नहीं, तुम वहाँ आरामसे बैठ जाओ। फिर कहो। [शीकू वहीं बैठ जाता है और राइफ़ल मैन उसके पीछे ज्योंका-त्यों खड़ा रहता है।]

शीकू : हुज़ूर यह मुकुल उसी बंकमें नौकर था। क्लर्क। यहीं टूराँ चौकीदार बना। रोज़ शामको छुट्टी होते यह टूराँके कमरेमें जम जाता। जाने क्या घुसुर-फुसुर बतियाता रहता।

कैप्टेन : ज़रा रुको! कौन-सा बैंक बताया तुमने?

शीकू : नाम तो ठीक नहीं जानता बाबू!

कैप्टेन : अच्छा ठीक। आगे कहो मुझे उस बैंकका सब हाल मालूम है।

शीकू : मैंने सोचा कि दोनों हमउम्र हैं कोई मुहब्बत-उहब्बत-की बात करते होंगे। क्यों खलल डालूँ इसमें। टूराँ रोज़ शाम इसके साथ जाने कहाँ-कहाँ घूमता। मैंने सह लिया वह भी। एक दिन टूराँ बड़ा ख़ुश-ख़ुश घर लौटा, आते ही चिपक गया मेरेसे। बोला, बापू अब हमारे भी दिन लौटेंगे। तुम ठाटके साथ रहोगे अब। मौज़ करोगे, हाँ। हमने कहा, बेटे, ईमानदारीकी दो रोटी मिल जाती है। बस, अपना तो यही राज है। टूराँ बीच ही में मेरी बात काटकर बोला, नहीं बापू, तुम सच जानो, अब हमारे दिन फिरनेवाले हैं। मैं कुछ न बोला सरकार! हँसता रहा।

सोचा, टूराँ नौजवान है। यदि अच्छे दिनके सपने देखता है, तो देखे। इसमें हरज क्या है।

मुकुल : अरे बुड्ढे, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। अपनी ज़बान रोक ले। अपनेपर न सही, अपनी इस बेचारी असहाय बहूपर तो थोड़ा तरस खा!

कैप्टेन : बख़्तावर, इसे उसी जीपपर ले जाओ और कसकर बाँधे रखो वहीं। हाँ शीकू तुम आगे कहो [बख्तावर मुकुल-को धक्के देते हुए ले जाता है।]

शीकू : टूराँ बाबू इस कमीनेके साथ जाने कहाँ-कहाँ आता-जाता। जाने कैसी-कसी बातें सुनता। जाने क्या-क्या मनसूबे बाँधता। एक दिन वह मुझसे बोला, बापू अब समय आ गया है, हमारी कठिनाइयोंका अन्त हो जायेगा। वह जाने क्या-क्या बकता रहा : चीन हमला करेगा। सेनाएँ आयेंगी। हम लोग मुक्त हो जायेंगे। मैंने उसे बड़ा डाँटा। मैंने कहा, टूराँ हम सीधे-साधे लोग ठहरे। हम अपनी धरतीको बेटीकी तरह मानते हैं। धरतीपर हमला करनेवाला हमारी बेटीपर हमला करता है। तुझे शरम नहीं आती, ऐसा सोचते। छिः। वह कुछ न बोला सरकार। ज़मीनपर ताकता रहा। धीरेसे कहा, तुम नहीं समझ सकोगे बापू! तुम्हें तो लाल झण्डेका मतलब भी नहीं मालूम। मैं हँसने लगा सरकार, मेरा टूराँ बहुत समझदार हो गया था बाबू, हाँ। [शीकू चुप हो जाता है।]

क्यूला : [पागलोंकी तरह आँखें नचाकर] हाँ, बापू वह तो मुझे भी बुद्धू कहता था!

कैप्टेन : इसके बाद ?

शीकू : टूराँ तीन-चार महीने पहले मुझसे बोला कि अब वह बंकमें नौकरी नहीं करेगा। उसने सड़क बनानेकी नौकरी कर ली। मैंने बड़ा समझाया उसे, अरे बैलकी औलाद, जब तुझे सुरखी-चूना कूटनेकी ही नौकरी करनी थी भय्ये, तो चायबगानकी नौकरी क्या बुरी थी। वह फिर कुछ न बोला। बिना मेरे हुकुमके सरकार वह सड़ककी नौकरीमें चला गया। बोमदि लासे भी और पार।

कैप्टेन : अच्छा ?

शीकू : हाँ बाबू ! मैंने सोचा ठीक है; जिस नौकरीमें इसका दिल लगे वही करे। मैं भी सरकार कलकत्ते छोड़कर बोमदि ला आ रहा। उसी समय पता चला बाबू कि मुलुकपर चीनने हमला कर दिया है। मैं सोचता, क्या टूराँ सच कहता था ? क्या सचमुच चीनी हमारी धरती छीनेंगे ? तभी बाबू हमारे दिमाग़में किसीने हथौड़ा-जैसा मारा। हमने कहा, यह सब टूराँको कैसे मालूम ? टूराँ-से और चीनियोंसे क्या वास्ता ? और सरकार मैंने पता लगाना शुरू किया [शीकू फिर चुप हो जाता है।]

कैप्टेन : क्या पता लगाया तुमने ?

शीकू : मुझे मालूम हुआ सरकार कि टूराँ ग़द्दार है। वह उन लोगोंमें शामिल है जो देशकी आबरू बेचना चाहते हैं। हमारी धरतीको दुश्मनोंके आगे भेंट चढ़ाना चाहते हैं। वे लोग अपने फ़ायदेके लिए, दूसरोंका गला काटना चाहते हैं।

कैप्टेन : फिर ?

शीकू : फिर मैंने सरकार एक आदमीसे कहकर टूराँको बुलवाया। वह आया भी बाबू।

कैप्टेन : कहाँ बुलवाया ?

शीकू : इसी जगह, जंगलमें। यहीं मिला मुझसे। मैंने कहा, साले तू दोगला है। तू नीच है। हरामख़ोर है। धोखे-बाज़ है। तूने अपनी महतारीकी छातीका दूध लजाया। तू साले दुश्मनोंका पैर चूमता है। तुझे लाज-शरम नहीं लगती। यह सब सुनकर वह हँसने लगा सरकार। हँसने लगा.....हा, हा, हा। [ग्लानि, लज्जा और क्रोध-भरे भावसे] मैंने उसको एक तमाचा मारा। काकुल पकड़कर खींचा। कहा; कमीने तू हँसता काहे है ? अरे बेशरम, तेरी आँखमें आँसू नहीं है, न सही, हँसता काहे है ? उसने कहा, सरकार, [एक क्षण रुककर] बापू जो होनेवाला है, वह होकर रहेगा। तुम आँधीके सामने अपने डैने काहे हिलाते हो !

कैप्टेन : क्या होनेवाला है ? क्या कहा उसने ?

शीकू : उसने कहा हुज़ूर कि चीनी सेनाको कोई रोक नहीं सकता। मैंने कहा, अबे जा बकरीकी औलाद ! तेरी चीनी सेनाकी ऐसीकी-तैसी। न काटके रख दिया हमारे जवानोंने गाजर-मूलीकी तरह तो कहना ! दो ठो पहाड़ी टीलोंपर क़ब्ज़ा कर लिया, बस बन गये शेर ! अबे उधर चढ़ाई थी, काहे कोई आफ़तमें पड़ता। पर साले तेरे बापोंकी सेना जाड़के आगे बढ़ी तो उसे आटे-दालका भाव मालूम हो जायेगा। तूने से लाका मोर्चा नहीं देखा है क्या ? फ़ौज, फ़ौज ! कोई आरपार है वहाँ ? मारे फ़ौज लाम बाँधे खड़ी है।

से लाको पार करके तो तेरे फरिश्ता भी नहीं आ सकते, ये साले अफ़ीमची क्या खाकर आयेंगे वहाँ ?

कैप्टेन : फिर ? फिर क्या कहा उसने ? [कैप्टेन रामसिंहकी ओर इशारा करता है ताकि वह सावधानीसे आगेकी बातें नोट करे, रामसिंह समझकर स्वीकृतिमें सिर हिलाता है ।]

शीकू : उसने कहा सरकार, कि देखते चलो बापू । जाड़से बोमदिलाका रास्ता केवल से ला होकर ही तो नहीं आता ! मैं आश्चर्यसे उसकी ओर देखने लगा । मुझे लगा कि इसमें कोई बहुत बड़ी चाल है ! बहुत बड़ा धोखा दिया जानेवाला है । मैंने बहुत पुचकारकर पूछा सरकार कि क्या उसे कोई दूसरा रास्ता मालूम है ? वह कुछ न बोला । मेरे बार-बार पूछनेपर सिर्फ़ यही कहता रहा, मैंने क़सम खायी है बापू कि यह भेद किसीसे न कहूँगा । [चुप हो जाता है ।]

कैप्टेन : तब ?

शीकू : तब बिना कुछ कहे इसी जंगलमें भाग गया बाबू ।

कैप्टेन : [बड़ी सहानुभूतिके साथ] जब तुम्हें शक हुआ शीकू, तो तुमने ये बातें पुलिसको क्यों न बतायीं ?

शीकू : [मोह-भींगी मुद्रामें] टूराँ मेरा इकलौता बेटा था सरकार । मैंने अपने दिलको बड़ा कड़ा किया बाबू । कई बार मनमें आया, चलकर सारी बातें पुलिसको बता दूँ । मनका बोझ हलका कर लूँ । [थके-थके शब्दोंमें, जैसे आत्माकी गहराईसे बातें निकल रही हों ।] पर हर बार सामने टूराँकी तसवीर खड़ी हो जाती थी । बिना माँके अपने बेटेकी तसवीर सरकार, जिसे मैंने कलेजेका ख़ून पिलाकर

पाला था। इसी कारण बेटेकी ममता मेरे पैरोंमें ज़ंजीर डाल देती। मुझे कई-कई रात नींद नहीं आयी। दिमाग़ कहता था कि तुम माँकी तरह प्यारी धरतीसे दग़ा कर रहे हो। मगर दिल हमेशा टूराँका साथ देता रहा। बाबू [अचानक बिलख उठता है जैसे बहाव रुक नहीं पा रहा हो] मैंने इस दिलकी [छातीपर हाथ रखकर] आवाज़ सुनकर अपनी आत्माकी आवाज़का गला दबा दिया। मैं गूँगा बन गया। मैंने घर-बार छोड़ दिया। तेजपुरके एक होटलमें नौकरी कर ली।

कैप्टेन : फिर तुमने आज इसका ख़ून क्यों किया ?

शीकू : [हाथसे आँसुओंको पोंछते हुए] कल शामको सरकार उस होटलमें सुना कि चीनी फ़ौज से लाको एक तरफ़ छोड़कर दूसरे रास्तेसे बोमदि ला चली आयी। चारों तरफ़ यही चर्चा थी। क़स्बेमें, चौराहेपर, चायकी दूकानोंपर, मोटरके अड्डेपर। लोग घबराये थे। नेहरू-जीका भाषण सुना। आवाज़ भरी-भरी थी। मेरे भीतर किसीने पूछा कि इस पापका ज़िम्मेदार कौन है ? ज़िम्मेदार ख़ाली मैं था। मैंने ही टूराँको जनमाया बाबू ? मैंने उस पापके घड़ेको पाला। मैंने ही अपनी ममताके कारन उसे छिपाया, बचाया, और आज मेरे ही कारन देशके इतने लोग मरे। इतना ख़ून बहा। मेरी आत्मामें किसीने जलती कील चुभो दी सरकार ! मैंने क़सम खायी बाबू कि इस पापके घड़ेको मैं ही तोड़ूँगा। तभी सरकार मैंने आप लोगोंकी बातें सुनीं। [एक क्षण विवेककी ओर देखता है। फिर आँखें मोड़कर रोज़की ओर। दोनोंके

चेहरोंपर विस्मय, सहानुभूति और आदरका भाव जैसे मौन बनकर छाया हुआ है] रहा-सहा सन्देह भी जाता रहा। मेम साहबको अपने पापाके लिए रोते देखा। जाने कितने होंगे ऐसे रोनेवाले। जाने कितने निर्दोष लोग पिस गये होंगे इस आफ़त-विपतमें!

कैप्टेन : फिर तुम इन्हीं लोगोंके साथ यहाँ चले आये? मगर तुम्हें मालूम कैसे हुआ कि टूराँ यहाँ होगा?

शीकू : आप लोगोंकी बातें सुननेके पहले ही मुझसे वह कमीना मुकुल मिला था बाबू। उसने हमको एक चिट दिया [फटे हुए कोटके भीतरसे चिट निकालता है जिसपर चीनी भाषामें कुछ लिखा है] और कहा कि यह टूराँने भेजी है। अब तो तुमको हमारी बातोंपर सन्देह नहीं है न शीकू। मगर अब जल्दीसे जल्दी बोमदि ला चले जाओ। मिलिट्री पुलिसको कुछ सुराग लग गया है। तुम्हारी ख़ैरियत नहीं। वहाँ रहोगे तो बचे रहोगे। फिर वहाँ टूराँ भी मिल जायेगा। बस! चैन रहेगी।

कैप्टेन : [कृत्रिम व्यंग्यसे] और उसी डरसे तुम भाग खड़े हुए?

शीकू : [व्यथित-सा होता हुआ] डर? वाह बाबू, आप भी क्या कहते हो सरकार! शीकूको अपने लिए कभी डर लगा है बाबू? मैंने सोचा आज टूराँसे मिलनेका अच्छा मौक़ा आ गया है। आज ही मैं अपने कलंकको मिटा सकता हूँ। मनका बोझ उतार सकता हूँ। आप सोच नहीं सकोगे बाबू कि मुझे टूराँसे कितनी घृणा हो गयी थी। मैं लाल रंगसे बहुत मुहब्बत करता था बाबू। हमारे क़बीलेके झण्डेका यही रंग है। हम अपनी

वनसप्ती देवीपर इसी रंगकी धजा चढ़ाते थे। लोग कहते हैं कि लाल रंग ग़रीबोंके ख़ूनकी याद दिलाता है। मगर बाबू टूराँने इसका जो मतलब बताया और जो काम किया, उससे मुझे लगा कि यह रंग ग़द्दारी और वतनके साथ घातकी निशानी हो गया है।

कैप्टेन : [कुछ सोचते हुए] इसीसे तुम लाल रंगकी चीज़ोंको तोड़-मरोड़ डालते थे ?

शीकू : हाँ सरकार, मैं लाल रंगसे ही घृणा करने लगा। यहाँ-तक कि लाल फूलोंको भी नहीं देख पाता था। जबतक उन्हें तोड़कर मसल न दूँ, चैन नहीं पड़ता था।

कैप्टेन : और फिर तुमने आकर यहाँ टूराँकी खोज की ?

शीकू : हाँ, उस नीचकी तलाश शुरू की। दो-एक बार क्यूलाको रोते देखा। बेचारी सोचती थी कि उसका पति देशके लिए लड़ रहा है। मनमें आता कि सब बातें क्यूलाको बता दूँ। पर हिम्मत न पड़ती। पता नहीं अबोध दुखियापर क्या बीते ! और कहीं टूराँ सावधान हो जाये और आये ही न। तभी मैंने अपनी आँखसे एक मुरदा सिपाही देखा बाबू। बेचारेके सीनेमें ग ली लगी थी। मैं उसके चेहरेको देखकर काँप उठा। वह भी तो किसी-का बेटा ही होगा ? उसका बाप भी तो उसे उसी तरह मानता-जानता होगा जैसे मैं टूराँको। पर यह लड़ाई कितनी ज़लील और कमीनी होती है बाबू कि ममताके रेशोंको शैतानी पैरोंसे झटककर तोड़ देती है। मैंने उस सिपाहीकी लाशको दफ़न किया। उससे क्षमा माँगी कि वह मेरे पापको क्षमा कर दे, मेरे बेटेको माफ़ कर

दे ! मेरे ख़ानदानको नरककी आगमें गिरनेसे बचा ले ! [रोता है । विवेक और रोज़ एक दूसरेकी ओर देखते हैं । उनकी आँखें भरी-भरी होती हैं ।] शीकू कहींका न रहा सरकार, कहींका नहीं । न दीनका न दुनियाका !

क्यूला : [अचानक जैसे चेहरेपर चमक छा गयी हो] बापू ! तुम रोते हो ? उस कमीने ग़द्दारके लिए रोते हो ? छिः छिः । मत रोओ बापू !

शीकू : [रोते-रोते] मैं किसके लिए रोता हूँ मेरी बच्ची ! तुझे क्या···तुझे क्या बताऊँ ? तुझे क्या बताऊँ बेटी !

क्यूला : मैं सब समझती हूँ बापू । [इस तरह हाथ उठाकर हिलाती हुई कि समूचे रहस्यको अपनी तर्जनीसे लपेट-समेट रही है] सब समझती हूँ । तुम इसलिए न रोते हो बापू कि मैं एक देशद्रोही धोखेबाज़के बच्चेकी माँ होनेवाली हूँ । हा-हा-हा-हा मैं देशद्रोहीके बेटेकी माँ होनेवाली हूँ । हा-हा-हा-हा देशद्रोहीकी ! हा-हा-हा ! वह धोखेबाज़ था ! धोखेबाज़ था ! [चिल्लाती हुई भागती है ।]

शीकू : क्यूला ! क्यूला····हे भगवान् ! बाबू उसे पकड़वाइए, उसे पकड़वाइए बाबू । वह पागल हो गयी है । पागल हो गयी है···वह जान दे देगी बाबू···जान दे देगी ! [फूट-फूटकर रो पड़ता है] मेरा वंश समाप्त हो गया ईश्वर । मेरा सारा परिवार नष्ट हो गया मालिक । मेरा परिवार नष्ट हो गया ।

[कैप्टेनके संकेतसे एक सैनिक क्यूलाको पकड़नेके लिए दौड़ता है ।]

कैप्टेन : [विवेक और रोज़की तरफ़ देखता है। उनकी आँखें डब-डबायी हुई हैं। चेहरेपर अजीब तरहके उदास भाव हैं] क्यों मिस्टर विवेक। [सहसा मुड़कर] रामसिंह ! शीकू-को दूसरी जीपपर बैठाकर इज़्ज़तके साथ कैम्प ले चलो। मैं अभी आया। हाँ टूराँकी लाशको भी उठवा लेना। [रामसिंह शीकूको लेकर चलता है तो वह घूमकर रोज़ और विवेककी तरफ़ हाथ जोड़कर कहता है :]

शीकू : अनजानेमें ही बाबू मुझसे आप लोगोंको जो तकलीफ़ हुई उसको क्षमा करना [व्यथित भावसे धीरे-धीरे जाता है, दो सैनिक स्ट्रेचरपर टूराँके शवको रखकर ले जाते हैं।]

कैप्टेन : कहो विवेक !

विवेक : क्या कहूँ कैप्टेन, ऐसा दर्दनाक दृश्य हमने कभी नहीं देखा। इस बेचारे शीकूको हम जाने क्या-क्या समझते थे। इतने महान् व्यक्ति तो पढ़े-लिखे ऊँचे समाजमें भी शायद ही होते हों !

कैप्टेन : [निचले होठको दबाता है जैसे व्यथाको रोकनेकी कोशिश कर रहा हो। और स्वीकृतिमें सिर हिलाता है] अच्छा भई, चल रहा हूँ। अब आप लोगोंसे तेजपुरमें ही मुला-क़ात होगी। गुड बाइ एव्री बडी [कैप्टेन चला जाता है। रोज़ और विवेक चुपचाप सामनेकी पहाड़ियोंको देखते खड़े रहते हैं।]

विवेक : [रोज़ से] अब !

[रोज़ और विवेक एक क्षण खोये-खोये-से खड़े रह जाते हैं। सहसा 'वह धोखेबाज़ था !' 'वह देशद्रोही था !!' की तेज़ आवाज़ें पहाड़ियोंमें काँपती-गूँजती हैं।]

विवेक : औरतका भाग्य भी कितने पहले तागेसे बँधा रहता है ! उसका पति जैसे उसके जीवनके सभी अर्थोंकी कुंजी है। आजतक क्यूला एक देशभक्त वीरकी पत्नी थी। उसकी वह बाट देखती थी। जंगल-जंगल दौड़ती उसके नामकी माला जपा करती थी, उसका एक-एक चिह्न सँजोकर रखे रही। और आज ? आज क्यूला एक देश-द्रोही धोखेबाज़की पत्नी है, जिसने धरतीके साथ दग़ा, की, देशके साथ विश्वासघात किया। आज क्यूला उसकी हर निशानीको अपने तन-मनसे निकालकर फेंक देना चाहती है। [रोज़ कुछ नहीं बोलती, जैसे कुछ सोच रही है] क्या सोच रही हो तुम ?

रोज़ : सोचती हूँ विवेक कि मनुष्य मनुष्यके जीवनके साथ ऐसा खिलवाड़ कबतक करता जायेगा। क्या हम हमेशा पशुओंकी तरह, या उनसे भी गिरी हालतमें, एक दूसरेके अस्तित्वको मिटानेके लिए ऐसे ही लड़ते-भिड़ते रहेंगे ?

विवेक : ठीक ही कहती हो ! ख़ैर, बताओ कि अब तुम्हारा इरादा क्या है ? मेरा तो जल्दी ही तेजपुर पहुँचना बहुत आवश्यक है। इन समाचारोंकी उत्कट प्रतीक्षा हो रही होगी।

रोज़ : तो ठीक है। चले चलेंगे आज ही।

[सहसा पहाड़ियोंके पीछेसे फिर वही चीत्कार गूँजती है : वह कभी नहीं आयेगा, कभी नहीं आयेगा····वह घोखेबाज था, वह देशद्रोही था।]

विवेक : इन घाटियोंका भी क्या विचित्र रूप है। कभी ये ऋषियोंके मन्त्रों और ऋचाओंसे गूँजती हैं। कभी तोप और बन्दूकोंकी आवाज़ोंसे। कभी इनमें प्रेमके गीत और

यात्रियोंके भजन-कीर्तन गूँजते हैं, तो कभी प्रवंचना और विश्वास-घातकी चीत्कारें। आओ रोज़ चलें।

[रोज़ इस तरह सोच रही है जैसे किसी अनजानी सतहमें डूब चुकी हो।]

विवेक : रोज़ ?

रोज़ : किन्तु विवेक, क्यूला ? क्यूलाको छोड़कर मैं नहीं जाना चाहती। [एक क्षण रुककर] तुम तेजपुर लौट जाओ। तुम्हें तुम्हारा कर्तव्य पुकार रहा है। तुम देशको सावधान करो। महान् वीरोंकी अमर कहानियाँ सुनाकर जागरूक और दृढ़ बनाओ। किन्तु मैं ? मैं तो इन बेघर-बार लोगोंके साथ, क्यूलाको लेकर ही अब तेजपुर आऊँगी। यही मेरा कर्त्तव्य है, यही उसकी माँग है।

विवेक : परन्तु रोज़, मरते समय तुम्हारे पापासे मैंने वचन दिया था कि तुम्हें सकुशल तेजपुर पहुँचा दूँगा।

रोज़ : पापाकी आत्मा यह जानकर ख़ुश होगी मित्र, कि मैंने अपने कर्त्तव्यकी पुकारको सुना। [विवेकका हाथ अपने हाथों-में लेकर] और तुम भी तो मुझसे यही आशा करते थे न कि मैं लोगोंके दुःखमें अपने दुःखको भूल जाऊँ !

विवेक : जैसी तुम्हारी इच्छा। [हलके मुसकराता है, पर चेहरेपर उदासी भी छा जाती है।]

रोज़ : और हाँ, तेजपुर जाकर तुम माताजीको अपने कुशलका समाचार देना न भूलना।

विवेक : [व्यथा-भरी स्मितिके साथ] और कुछ ?

रोज़ : और फ़ादर पिण्टोके पास जाकर मेरी बेबीको भी देख लेना।

विवेक : अच्छा !

[तभी सहसा पहाड़ियोंके पीछेसे क्यूलाकी वही चीख सुनाई पड़ती है : वह कभी नहीं आयेगा, कभी नहीं आयेगा, वह धोखेबाज़ था !]

रोज़ : [एक क्षण विवेकके चेहरेपर ममता और प्रेमसे देखती है।] गुड बाइ डियर [हाथ छुड़ाते आँखें डबडबा आती हैं। सहसा वे ही चीत्कारें पुनः गूँजती हैं।] गुड बाइ [विवेक विदा करते हाथ हिलाता रहता है। रोज़ ओझल हो जाती है। चुपचाप मंचपर खड़ा विवेक हिमालयकी बर्फ़ीली चोटियोंको निहारता होता है। तभी उसे लगता है, जैसे चीत्कारोंकी पृष्ठभूमिसे गोपाल शर्माके गानेके स्वर पहाड़ोंमें घायल भौंरोंकी तरह मँड़रा रहे हैं।]

जब हम हँसते तब ये हँसते
जब हम रोते ये चुप करते
इनके लिए सौ जन्म जियेंगे
इनके लिए सौ जन्म मरेंगे
इनको कभी ना भूल सकेंगे।

[विवेक लम्बी साँस खींचता हुआ चल देता है।]

[परदा]

भारतीय राजदूतावास

8996

लेखक

जन्म १९ अगस्त १९२९, जलालपुर जमानिया, वाराणसी। सन् १९५३ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालयसे हिन्दीमें एम० ए० और सन् १९५७में पी-एच० डी० किया। सम्प्रति काशी विश्व-विद्यालयके हिन्दी विभागमें प्राध्यापक।

लेखन : ❀ आरपारकी माला, ❀ कर्मनाशाकी हार, ❀ इन्हें भी इन्तज़ार है, [कहानी-संग्रह] ❀ कीर्ति-लता और अवहट्ट भाषा, ❀ सूरपूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य, [शोध ग्रन्थ] ❀ विद्यापति, [समीक्षा] ❀ शिखरोंका सेतु, [ललित निबन्ध] ❀ अन्तरिक्षके मेहमान, [वैज्ञानिक रिपोर्ताज़] ❀ रसरतन, [सम्पादित] ❀ मुरदा सराय [कहानी संग्रह, प्रकाश्य] ❀ बन्द गलियोंवाली बस्ती, [उपन्यास, प्रकाश्य] ❀ और यह जो आपके हाथों है।

● ● ●

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन
तथा लोक-हितकारी
मौलिक-साहित्यका निर्माण

संस्थापक
साहू शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५